साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र
खेती संदेश
मूल्य : 6/- रुपए
WEEKLY KHETI SANDESH
All Subject to Patiala Jurisdiction.
E-mail : khetisandesh2025@gmail.com
RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Chief Editor : Parminder Kaur • Issue Dt. 20-10-2025 • Vol.1 No.9 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

गेहूं की बंपर पैदावार के लिए बीजोपचार है जरूरी

किसानों के लिए गेहूं की अच्छी पैदावार प्राप्त करना कई कारकों पर निर्भर करता है, जिनमें बुवाई से पहले बीजों का सही उपचार एक महत्वपूर्ण कदम है। बीजोपचार न केवल फसल को प्रारंभिक अवस्था में ही रोगों और कीटों से बचाता है, बल्कि अंकुरण भी बेहतर करता है, जिससे उपज में वृद्धि होती है। आइए गेहूं के बीजों का उपचार करने के विभिन्न तरीकों के बारे में विस्तार से जानते हैं।

दीमक से बचाव है पहला कदम

गेहूं की फसल में दीमक सबसे बड़े नुकसान पहुंचाने वाले कीटों में से एक है। बीजों को

दीमक के प्रकोप से बचाने के लिए, 600 मिलीलीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. या 500 मिलीलीटर इथियोन 50 ई. सी. को 1 लीटर पानी में घोल लें। इस तैयार घोल को 100 किलोग्राम बीज पर अच्छी तरह से छिड़काव करें, ताकि सभी बीजों पर घोल की एक समान परत चढ़ जाए। इसके बाद बीजों को छाया में सुखाएं और कोशिश करें कि बुवाई 2 घंटे के अंदर ही कर दी जाए। इस कार्य के लिए स्प्रे मशीन का इस्तेमाल किया जा सकता है।

बीज जनित रोगों पर रोकथाम

बीजों के माध्यम से फैलने वाले रोगों को रोकने के लिए कवकनाशी दवाओं का प्रयोग किया जाता है। प्रति किलोग्राम बीज की दर से 2 ग्राम थाइरम या 2.5 ग्राम मैन्कोजेब का छिड़काव करें। अगर खेत में कण्डवा रोग (जिसे अनावृत या पात कण्डवा भी कहते हैं) की समस्या रही है, तो 2 ग्राम कार्बोक्सीन प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचार करना अधिक प्रभावी रहता है।

खारी मिट्टी वाले क्षेत्रों के लिए विशेष उपाय

जिन क्षेत्रों की मिट्टी खारी है या सिंचाई के लिए उपलब्ध पानी में लवणता अधिक है, वहां बीजों के अंकुरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। ऐसी स्थिति में, 1.5 किलोग्राम सोडियम सल्फेट को 50 लीटर पानी में मिलाकर 3 प्रतिशत का घोल बनाएं। बीजों को इस घोल में 24 घंटे तक डुबो कर रखें। 24 घंटे के बाद बीजों को निकालकर सादे पानी से अच्छी तरह धो लें और फिर छाया में सुखाकर बुवाई करें। ध्यान रहे, यह विधि तभी अपनाएं जब मिट्टी की विद्युत चालकता 4 से अधिक और पी.एच. मान 8.5 से कम हो।

ईयर कॉकल और टुण्डु रोग का समाधान

इस रोग से बचाव के लिए एक आसान उपाय है। एक बड़े बर्तन में 20 प्रतिशत नमक का घोल तैयार करें और उसमें बीजों को डाल दें। हल्के और संक्रमित बीज घोल की सतह पर तैरने लगेंगे, जबकि स्वस्थ और भारी बीज नीचे बैठ जाएंगे। तैरने वाले बीजों को अलग कर नष्ट कर दें और नीचे बैठे बीजों को साफ पानी से धोकर सुखा लें। जिन खेतों में इस रोग का प्रकोप अधिक हो, वहां कुछ सालों तक गेहूं की खेती न करने की सलाह दी जाती है।

जैविक उपचार से पोषण और बचत

रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करने और पोषण बढ़ाने के लिए जीवाणु कल्चर से बीजोपचार एक उत्कृष्ट विकल्प है। एजोटोबेक्टर और फास्फोरस सोल्युबलाइजिंग बैक्टीरिया (PSB) से बीजों का उपचार करने से मिट्टी में नाइट्रोजन व फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ती है। इससे प्रति हैक्टेयर लगभग 20 से 30 किलो नाइट्रोजन और इतनी ही मात्रा में फास्फोरस की बचत होती है, जिससे लागत कम होती है और पर्यावरण को भी लाभ मिलता है।

दीमक नियंत्रण का जैविक तरीका

दीमक के नियंत्रण के लिए मेटाराइजियम नामक जैविक कवक का प्रयोग भी कारगर पाया गया है। बुवाई के समय खेत में 5 किलोग्राम मेटाराइजियम प्रति हेक्टेयर की दर से डालें। साथ ही, बीजों को 10 ग्राम मेटाराइजियम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित भी करें। यदि खड़ी फसल में दीमक दिखे, तो 4 लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. को प्रति हैक्टेयर के हिसाब से सिंचाई के पानी के साथ देना चाहिए। निष्कर्षत:, गेहूं की फसल से अच्छी पैदावार लेने के लिए बीजोपचार एक आधारभूत और अत्यंत लाभकारी प्रक्रिया है। इन सरल और प्रभावी तरीकों को अपनाकर किसान न केवल रोगों एवं कीटों से अपनी फसल का बचाव कर सकते हैं, बल्कि उत्पादन और आमदनी दोनों को बढ़ा सकते हैं।

अक्सर यह देखने में आता हैं कि किसान ने बाग–बगीचे लगाते समय कई तरह की गलतियां कर बैठते हैं, जिनको बाद के वर्षों में सुधारना कठिन हो जाता है। इसका खामियाजा आने वाले वर्षों में भुगतना पड़ता हैं। नये बाग–बगीचों की स्थापना के समय जरूरी हो जाता है कि बागवान उपयुक्त योजना बनाकर उसकों सही तरीके से क्रियान्वित करें ताकि अधिक आय अर्जित की जा सके।

वैज्ञानिक तरीके से लगाएं नये बाग

पूनम सैनी और राजेश कथवाल, क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र (बागवानी), बुरिया, यमुनानगर
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बागवानी फसलें पोषण सुरक्षा एवं आर्थिक दृष्टिकोण से काफी महत्वपूर्ण है। ये रोजगार के अवसरों में भी वृद्धि करने में सहायक होती हैं। पिछले कुछ वर्षों में बागवानी के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई हैं। कई प्रदेशों में बागवानी ने एक व्यवसाय का रूप ले लिया है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में जलवायु के अनुसार अनेक प्रकार के फलदार पौधे लगाए जाते है। ये पौधे बहुवर्षीय प्रवृति के होने के कारण लंबे समय तक आमदनी देते रहते है। अक्सर यह देखने में आता है कि किसान ने बाग–बगीचे लगाते समय कई तरह की गलतियां कर बैठते हैं, जिनको बाद के वर्षों में सुधारना कठिन हो जाता है। इसका खामियाजा आने वाले वर्षों में भुगतना पड़ता हैं। नये बाग–बगीचों की स्थापना के समय जरूरी हो जाता है कि बागवान उपयुक्त योजना बनाकर उसकों सही तरीके से क्रियान्वित करें ताकि अधिक आय अर्जित की जा सके।

फलदार बगीचों में दीर्घकालीन निवेश होने के कारण जगह का चुनाव बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है। ऐसे स्थान का चयन करे, जहां आवगमन के साधन सहजता से उपलब्ध होने के साथ ही श्रमिकों की उपलब्धता, पानी की व्यवस्था, जल निकास इत्यादि का समुचित प्रबन्ध हों। यह भी ध्यान रखे जहां भी बाग लगाना है, वहां दो मीटर की गहराई तक सख्त कठोर कंकड़ युक्त परत नहीं हो। भूमि का चुनाव करने के बाद उसका समतलीकरण करना भी आवश्यक है। खेत का ढलान 5–10 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। भूमि की तैयारी के साथ ही सुरक्षा के लिए कांटेदार तार, जालीदार तार, अथवा कांटेदार पौधे जैसे बोगनविलिया, करौदा आदि लगा ले।

खेत रेखाकंन

बाग लगाने के लिए ऐसी विधि का चयन करना आवश्यक है, जिसमें कम खर्च व देखभाल के साथ ही ज्यादा फायदा मिल सके। इसके साथ मौजूद संसाधनों का भी प्रयोग हो सके। मैदानी भागों में वर्गाकार विधि अधिक प्रचलित है। इसमें कतार से कतार व पौधे से पौधे की दूरी बराबर रखी जाती है। इसमें कृषि क्रियाएं अच्छी तरह से की जा सकती है व पौधों को भी प्रर्याप्त रोशनी मिलती रहती है।

गड्ढों की खुदाई

गड्ढों की खुदाई मई–जून में, जब तेज धूप रहती है, तब करनी चाहिए। इसका आकार पौधों के फलाव व बढ़वार पर निर्भर करती है। बड़े आकार के फल वृक्षों (आम, आवलां, कटहल, बेल, जामुन, लीची आदि) के लिए 1×1×1 मीटर, मध्यम आकार वाले फल वृक्षों जैसे – अमरूद, नींबू वर्गीय, सीताफल, अनार के लिए 0.75×0.75×0. 75 मीटर व छोटे आकार वाले फल वृक्षों जैसे – पपीता, करौदा आदि के 0.5×0×5×0×5 मीटर आकार के गड्ढ़ों की खुदाई करें।

खुदाई के बाद गड्ढो को तीस से चालीस दिनों तक तेज धूप में खुला ही छोड़ दें, जिसमें मृदा में उपस्थित हानिकारक कीटाणु व जीवाणु समाप्त हो जायें। ऊपर की आधी मिट्टी में प्रति गड्ढे की दर से 20–25 किलोग्राम सड़ी गली गोबर खाद के अलावा 1.50 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट, 500 ग्राम नीम खली व 50 ग्राम, क्लोरोपाइरीफॉस धूल मिलाकर जमीन की सतह से 15–20 सैंटीमीटर ऊपर तक भर दे व व्यवस्थित होने के लिए छोड़ दे। 1 – 2 बारीश के बाद मिट्टी जब नीचे बैठ जाएं , उसके बाद रोपण का कार्य आंरम्भ करें।

फल वृक्षों की किस्मों का चयन

फलदार पौधों का चुनाव मृदा के स्वभाव एवं जलवायु पर निर्भर करता है। चयन से पूर्व खेत की मृदा व पानी की जांच आवश्य करवा लें। सामान्य स्वभाव वाली मृदा में सभी प्रकार के फल वृक्ष असानी से लगाएं जा सकते हैं। अधिक लवणीय व क्षारीय भूमि में कुछ चयनित पौधे जैसे – बेर, आवलां, खजूर, बेल, लसोडा, करौदा, जामुन आदि ही लगाएं जा सकते हैं। फल वृक्ष चुनाव के साथ ही उसकी सही प्रजाति का चयन भी जरूरी है ताकि अच्छी गुणवता के उत्पादन के साथ ही अधिक पैदावार मिल सकें।

पौध लगाने का समय व तरीका

सदाबहारी पौधों जैसे – आम, नीबू, अमरूद, अनार, लीची आदि के लिए बरसात का समय (जुलाई–अगस्त) सर्वोतम होता है। पर्वतीय अथवा पतझड़ी पौधों जैसे – आड़ू, अंगूर, नाशपाती, आंवला, बेर आदि लगाने के सर्दियों का मौसम (दिसंबर–फरवरी) अच्छा रहता है। सिंचाई जल की उपलब्धता होने पर रोपण कार्य (फरवरी– मार्च) में भी किया जा सकता है। पौधें लगाते समय ध्यान रखें कि यह गड्ढों में उतनी गहराई तक ही लगे जितनी गहराई तक वह नर्सरी या पॉलीथीन कि थैली में था। रोपण करते समय यह भी ध्यान रखे कि पौधे गड्ढ़े के मध्य में लगे साथ ही मिट्टी की पीड़ी ना बिखरे अन्यथा जड़ों के क्षति ग्रस्त होने की भी आंशका होती है। प्लांटिंग बोर्ड का उपयोग भी पौधों को गड्ढे के बीचों बीच लगाने के लिए किया जा सकता हैं। पौधे लगाने के बाद इसकी आस पास की मिट्टी अच्छी तरह दबा देनी चाहिए। जहां तक संभव हो रोपण का कार्य सांयकाल के समय ही करें, जिससे उसको स्थापित होने के लिए पर्याप्त समय मिल सके। रोपण के बाद यदि बारिश नहीं हो रही हो तो सिंचाई अवश्य करें। गर्मियों में 7–10 दिनों के अंतराल पर व सर्दियों में 15–20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहे।

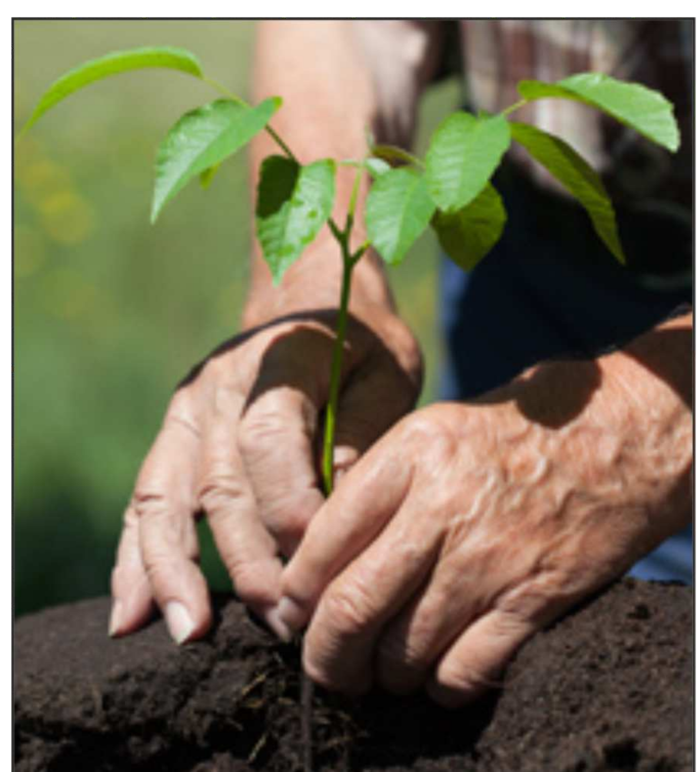

खाद एवं उर्वरक

बाग लगाने से पूर्व मृदा जांच आवश्यक रूप से करवा लेनी चाहिए। उसी की सिफारिश के आधार पर खाद एवं उर्वरकों का इस्तेमाल करना चाहिए। फल वृक्षों में खाद एवं उर्वरकों की मात्रा, मृदा की उर्वरकता, पौधों की उम्र तथा फसल की दी गई कार्बनिक खाद की मात्रा पर निर्भर करती है। खाद व उर्वरक हमेशा तने से दूर ही डाले और पौधों के फैलाव तक डाले। सामान्यत: एक वर्ष के पौधे में 5 किलोग्राम अच्छी सड़ी गोबर की खाद के आलाव 50 ग्राम नाइट्रोजन, 25 ग्राम फॉस्फोरस व 50 ग्राम पोटाश डालें। यह मात्रा पौधों की उम्र की दर से बढ़ती जाती हैं।

वायुरोधी वृक्षों का रोपण

वायुरोधक वृक्ष गर्मी लू तथा सर्दी में पाले से बचाव तो करते है। इसके साथ ही ये बाग का सूक्ष्म वातावरण भी परिवर्तित कर देते हैं। देसी आम, जामुन, बेल, शहतूत, खिरनी, देसी आंवला, शीशम, कैंथ, कटहल, इमली आदि इस उदेश्य के लिए उगा सकते है। वायुरोधी वृक्ष अपनी लंबाई के 4–6 गुना दूरी तक बाग की रक्षा करते हैं। बाग में इन वृक्षों की एक या दो कतार लगाई जाती है। इन वृक्षों को बाग में उतर व पश्चिम दिशा में लगाया जाता है। यदि खेत में जगह पर्याप्त हो तो ये खेत के चारों ओर भी लगा सकते हैं।

आलू की खेती के लिए उन्नत मशीनें

अजीत सिंह, सहायक प्रोफैसर (कृषि इंजीनियरिंग), चौ.च.सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय कृषि महाविद्यालय, कौल (कैथल); **निशा चौधरी**, पीएच.डी. स्कोलर (कंप्यूटर विज्ञान और इंजीनियरिंग), गुरु जम्भेश्वर विज्ञान और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, हिसार; **विनोद कुमार**, अनुसंधान सहयोगी, आरबीईई विभाग, चौ.च.सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार; **मीनाक्षी सांगवान**, जिला विस्तार विशेषज्ञ, चौ.च.सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय कृषि विज्ञान केन्द्र, रोहतक

भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहां की अर्थव्यवस्था का बड़ा हिस्सा खेती–किसानी से जुड़ा हुआ है। सब्ज़ियों में आलू का अपना विशेष स्थान है। चाहे उत्तर भारत हो या दक्षिण, आलू हर घर की थाली में किसी न किसी रूप में जरूर शामिल होता है। आलू को सब्जियों का राजा भी कहा जाता है क्योंकि यह हर सब्जी के साथ मेल खा लेता है और साल भर उपलब्ध रहता है। परंतु आलू की खेती उतनी आसान नहीं है जितनी हमें थाली में आलू दिखती है। बुवाई से लेकर खुदाई तक यह मेहनत और समय मांगने वाली प्रक्रिया है। आज के समय में जब किसानों के पास श्रमिकों की कमी है और खेती की लागत लगातार बढ़ रही है, तो उन्नत मशीनों का उपयोग न केवल आलू उत्पादन बढ़ाने में मदद करता है बल्कि खेती को लाभकारी भी बनाता है।

आलू की खेती का महत्व

भारत में आलू की खेती मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, पंजाब, हरियाणा और मध्य प्रदेश जैसे राज्यों में की जाती है। भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा आलू उत्पादक देश है। इसकी मांग घरेलू बाजार के साथ–साथ निर्यात के लिए भी लगातार बढ़ रही है। आलू एक ऐसी फसल है जो किसानों को त्वरित नकदी उपलब्ध कराती है। इसकी पैदावार अन्य फसलों की तुलना में अधिक होती है। जहां एक ओर यह किसानों की आय बढ़ाता है, वहीं दूसरी ओर देश की खाद्य सुरक्षा में भी योगदान देता है।

पारंपरिक खेती की चुनौतियां

अब तक अधिकांश किसान आलू की बुवाई और खुदाई परंपरागत तरीकों से करते रहे हैं। हल या बेलों के सहारे क्यारियां बनाना, हाथ से आलू रोपना और बाद में खुदाई करना काफी श्रमसाध्य और समय लेने वाला काम है।

मुख्य चुनौतियां हैं

श्रमिकों की कमी : आजकल ग्रामीण इलाकों से लोग शहरों की ओर पलायन कर रहे है, जिससे खेती के काम के लिए मजदूर कम हो रहे हैं।

समय की अधिक खपत : हाथ से बुवाई और खुदाई में काफी समय लगता है।

लागत अधिक होना : मजदूरी पर खर्च बढ़ जाता है, जिससे किसानों का लाभ कम हो जाता है।

उत्पादन में कमी : कई बार हाथ से काम करने में आलू की क्षति भी हो जाती है।

उन्नत मशीनों की आवश्यकता

किसानों की इन समस्याओं को देखते हुए कृषि वैज्ञानिकों और मशीन निर्माताओं ने ऐसी आधुनिक मशीनें विकसित की है जो आलू की बुवाई, गुड़ाई, सिंचाई और खुदाई का काम तेजी और आसानी से कर सकती है। इन मशीनों के इस्तेमाल से न केवल लागत कम होती है बल्कि उत्पादन भी बढ़ता है।

आलू की खेती में प्रयोग होने वाली उन्नत मशीनें

आलू बुवाई मशीन (Potato Planter) : यह मशीन बीज आलू को समान दूरी पर और सही गहराई पर बोती है। ट्रैक्टर से चलने वाली यह मशीन खेत में एक जैसी क्यारियां बनाकर बीज डालती है और ऊपर से मिट्टी भी चढ़ा देती है। इससे बुवाई तेज होती है और बीज की बर्बादी नहीं होती।

आलू खुदाई मशीन (Potato Digger/Harvester) : यह मशीन खेत से आलू निकालने के लिए उपयोग होती है। मशीन आलू को जमीन से निकालकर मिट्टी अलग कर देती है और साफ–सुथरे आलू सतह पर आ जाते है। इससे आलू के टूटने या खराब होने की संभावना बहुत कम रहती है।

मल्चिंग मशीन : आलू की फसल में नमी बनाए रखने और खरपतवार रोकने के लिए मल्चिंग की जरूरत होती है। आधुनिक मल्चिंग मशीनें प्लास्टिक या जैविक सामग्री की परत बिछाकर मिट्टी की नमी सुरक्षित रखती हैं।

स्प्रे मशीन : आलू की फसल पर अक्सर कीट और रोगों का हमला होता है। पावर स्प्रेयर या ड्रोन स्प्रे मशीन की मदद से दवाइयां तेजी और समान रूप से फसल पर छिड़की जाती है।

ग्रेडिंग और स्टोरेज मशीन : आलू की खुदाई के बाद उन्हें आकार के अनुसार अलग करना जरूरी होता है। ग्रेडिंग मशीन आलू को छोटे, मध्यम और बड़े आकार में वर्गीकृत करती है। साथ ही, कोल्ड स्टोरेज तकनीक भी आधुनिक मशीनरी का हिस्सा है जो आलू को लंबे समय तक सुरक्षित रखती है।

किसानों के अनुभव : कई किसानों ने बताया कि आलू बुवाई मशीन से उनकी बुवाई का काम पहले के मुकाबले आधा समय में पूरा हो जाता है। खुदाई मशीन के इस्तेमाल से न केवल श्रम लागत घटती है बल्कि आलू भी कम क्षतिग्रस्त होते हैं।

हरियाणा के एक किसान का कहना है, "पहले हम दस बारह मजदूर लगाकर एक दिन में आधा खेत बो पाते थे। अब आलू प्लांटर मशीन से पूरा खेत आधे दिन में तैयार हो जाता है। इससे मजदूरी पर खर्च घटा है और काम भी समय पर हो जाता है।"

लाभ :

बुवाई और खुदाई का काम तेज और आसान।

लागत में कमी, उत्पादन में वृद्धि।

बीज और फसल की बर्बादी कम।

समय की बचत और श्रमिकों पर निर्भरता कम।

आलू की गुणवत्ता में सुधार और बाजार में अच्छी कीमत।

निष्कर्ष :

आज के दौर में जब खेती पर दबाव लगातार बढ़ रहा है और किसान कम दाम पर भी मेहनत कर रहे हैं, ऐसे में उन्नत मशीनें उनके लिए वरदान साबित हो रही है। आलू की खेती के लिए बुवाई से लेकर खुदाई तक हर चरण के लिए मशीनें उपलब्ध है। इनका उपयोग करके किसान अपनी मेहनत और समय दोनों बचा सकते है और साथ ही फसल की पैदावार और गुणवत्ता भी बढ़ा सकते हैं। भविष्य में उम्मीद है कि और भी नई तकनीकें आएंगी, जिनसे आलू की खेती पूरी तरह से मशीनीकृत हो जाएगी। जब किसान आधुनिक मशीनों को अपनाएंगे तो आलू उत्पादन न केवल देश की जरूरतें पूरी करेगा बल्कि विदेशों में भी भारतीय आलू की पहचान मजबूत होगी।

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 01 अंक : 09
तिथि : 20-10-2025

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड
डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly
'KHETI SANDESH' Printed at **Drishti Printers,**
Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market,
Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and
published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar,
Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com
Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

महज घास नहीं, ये हैं औषधियां

हमारे बागीचे या गमलों में कई बार छोटे–छोटे पौधे या घास उग आती है, जिसे जंगली समझ कर अक्सर निकाल दिया जाता है। लेकिन इनमें से कई तरह की घास आयुर्वेद के हिसाब से हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी होती हैं, जिनके बारे में जान कर आप भी इन्हें सहेजना चाहेंगे। ऑल इंडिया इंस्टीट्यूट ऑफ आयुर्वेद–दिल्ली के आचार्य महेश कुमार व्यास के मुताबिक इन घासों में कई किस्म के लाभकारी तत्व होते हैं। आईये उन्हें जानें।

कुल्फा या लूना : यौर्चुला सैकुलेंट फैमिली का कुल्फा पौधा अक्सर दिखाई दे जाता है। इसकी पत्तियों में ओमेगा-3 बहुत ज्यादा मात्रा में मिलता है। इसकी सब्ज़ी या सूप भी बनाई जाती है। अगर आपको ओमेगा-3 चाहिए, तो रिफाइंड की जगह आस-पास मिलने वाली इस घास का इस्तेमाल कर सकते हैं। इसमें विटामिन ई, आयरन, मैग्नीशियम, पोटाशियम जैसे पौष्टिक तत्व भी मिलते हैं। आप चाहें तो इस पौधे को अपने बागीचे में कटिंग या बीज से आसानी से उगा सकते हैं।

अकरकरा : इसमें छोटे-छोटे पीले रंग के फूल भी आते हैं। यह पौधा नमी वाली जगह पर आसानी से उग जाता है। अगर आपके मुंह में छाले हैं, दांत या सिर में दर्द हो तो इसके फूल को हल्का-सा मसल कर प्रभावित जगह पर रखने से आराम मिलता है। यह पौधा कटिंग से भी आसानी से लगाया जा सकता है।

भृंगराज : सिर में लगाए जाने वाले भृंगराज तेल से तो सभी वाकिफ होंगे। इसके छोटे-छोटे पौधे नमी वाली जगहों या बागीचे में क्यारियों के पास आसानी से मिल जाते हैं। लेकिन जानकारी ना होने के कारण जंगली पौधे मान कर अक्सर निकाल दिया जाता है। इसमें छोटे-छोटे सफेद, पीले और नीले फूल आते हैं। इसके पत्तों को हल्का-सा पीस कर बालों में लगाना फायदेमंद होता है।

भूमि आंवला : इसके छोटे-छोटे पौधे घास के रूप में गमलों में भी आसानी से मिल जाते हैं। इसकी पत्तियों के रस का उपयोग फैटी लिवर, पीलिया जैसी बीमारियों की मेडिसिन में किया जाता है। इनके पत्तों के रस को रेगुलर पीना फायदेमंद होता है। इसे च्यवनप्राश में भी इस्तेमाल किया जाता है। पत्तों के रस को घमौरी पर लगाने से आराम मिलता है।

मकोय : इसके पौधे पर छोटे-छोटे टमाटर जैसे फल लगते हैं। लाल या काले रंग के पके फल खाना लाभकारी है। आयुर्वेद में इनके सूखे हुए बीजों का उपयोग डायबिटीज़ के इलाज में किया जाता है। पेट में दर्द, किडनी, लिवर की समस्याओं में मकोय के पत्तों को सब्ज़ी, काढ़ा या पीस कर निकले रस को पी सकते हैं।

चिड़चिड़ा : इसके पौधों के ऊपर लंबी डंडी होती है, जिसमें छोटे-छोटे फल लगते हैं, जिनके पास से गुजरने पर आपके कपड़ों पर चिपक जाते हैं। इसके पत्तों के पेस्ट का प्रयोग किडनी, पाइल्स, फोड़े-फुंसियों में किया जाता है। पत्तों का काढ़ा खांसी में लाभदायक होता है। इसकी जड़ों का उपयोग सप्ताह में एक बार दातून की तरह करने से दांत दर्द, पायरिया जैसी समस्या में असरदार है।

पुनर्नवा : इसके पत्तों का पाउडर कैप्सूल, टैबलेट के रूप में मिलता है। इनमें पोटाशियम नाइट्रेट और हाइड्रोक्लोराइड बहुत ज्यादा मात्रा में होता है। किडनी में कोई समस्या होने, यूरिन इंफेक्शन में फायदेमंद है। लिपिड या कोलेस्ट्रॉल का लेवल कंट्रोल करता है। पत्तों में पाया जाने वाला मैग्नीशियम ब्लड प्रैशर में उपयोगी है। एंटी एजिंग गुणों के कारण पत्तों का लेप असरदार है। यह पौधा ज़मीन से चिपका होता है और बहुत छोटे फलू भी होते हैं।

दूधी घास : इसके पत्तों का रस छोटी दूधी घास अतिसार, कब्ज़ जैसी पेट संबंधी समस्याओं, नकसीर में असरदार है। खांसी में इसका काढ़ा पीना फायदेमंद है। इन्हें तोड़ने पर दूध जैसा तरल निकलता है। इनके पत्तों से निकला रस मस्सों पर लगाने से खत्म हो जाते हैं।

सत्यानासी या कटेली : पत्थरों वाले स्थान पर सड़क किनारे यह पौधा आसानी से मिल जाता है। इनके पत्तों के पिछले हिस्से में छोटे-छोटे कांटे और पीले रंग के फूल आते है। इसके पत्तों का प्रयोग मलेरिया, बुखार, अल्सर, स्किन संबंधी समस्याओं में किया जाता है। जड़ों का उपयोग यूरिन इंफेक्शन में किया जाता है। इसकी जड़ों को अजवायन के साथ मिला कर बने काढ़ा पीने से पुरानी से पुरानी कब्ज़ दूर हो जाती है।

पुलियारी : बहुत आसानी से मिल जाते हैं। इसमें छोटे-छोटे पीले रंग के फूल आते हैं। इसके पत्तों का स्वाद थोड़ा खट्टा होता है, जिनसे चटनी भी बनाई जाती है। ये विटामिन सी और कैल्शियम का अच्छा स्त्रोत मानी जाती है। खूनी दस्त में इसके 15–20 पत्तों का रस पीना फायदेमंद है। चोट लगने की वजह से सूजन हो गई हो, तो पत्तों का पेस्ट लगाने से आराम मिलता है। पेट से जुड़ी समस्या में चटनी खाई जा सकती है। किडनी में स्टोन की समस्या होने पर इन्हें इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।

दूब या दुर्वा घास : आसानी से मिलने वाली दूब घास पर पड़ी ओस के ऊपर सुबह नंगे पैर चलने से आंखों की रोशनी बढ़ती है। घास को पीस कर बने पेस्ट को पैरों के तलवों पर लगाने से स्ट्रेस कम होता है। सिरदर्द में इस पेस्ट में थोड़ा-सा चूना मिला कर लगाना फायदेमंद है। नकसीर की समस्या में इसके रस की 3–4 बूंदें डालें। मुंह के छाले हों, तो दूब घास चबा कर थूक दें और ठंडा पानी पिएं। एसिडिटी या अल्सर के लिए खाली पेट घास का एक चम्मच रस पीकर उसके ऊपर पानी पीना फायदेमंद है।

लोमड़ी पूंछ घास : इसके फलों या लम्बी डंडी पर चिपकने वाले बीजों से इसे पहचाना जा सकता है, जो कपड़ों पर आसानी से चिपक जाते हैं। बच्चे इन्हें जोड़ कर कई आकृतियां बनाते हैं। इसके पत्तों का काढ़ा पीना किडनी के रोगियों या पेशाब रुक-रुक कर आने की समस्या में लाभकारी है।

रजनी अरोड़ा

बरसीम की वैज्ञानिक खेती एवं गुणवत्ता बीज उत्पादन तकनीक

कृषि क्षेत्र गतिशील है। कृषि एक देश की अर्थव्यवस्था में बहुत योगदान देती है और विकासशील देशों में रोज़गार के द्वारा उच्चतम मानव संसाधन शामिल करती है। चारा फसलों में सुधार सीमित है और चारा उत्पादन और उत्पादकता में सबसे महत्वपूर्ण बाधा विभिन्न पारिस्थितिक-भौगोलिक क्षेत्रों के तहत किसानों को बेहतर गुणवत्ता वाले बीज की अनुपलब्धता है। खाद्य और चारा के लिए अनाज के उच्च उत्पादन और उत्पादकता की मांग की गंभीर रूप से बढ़ती आबादी के कारण चारा फसल क्षेत्र का विस्तार संभव नहीं है, जबकि वाणिज्यिक फसलों पर उच्च आर्थिक रिटर्न के लिए ध्यान दिया जा रहा है, इसलिए गुणवत्ता वाले बीज की उपलब्धता आवश्यक और सबसे महत्वपूर्ण है।

बरसीम (ट्राइफोलियम अलेक्जेंड्रिनम, $2n=2x=16$) हरे चारे के लिए विश्व स्तर पर उगाई जाने वाली रबी मौसम की सबसे महत्वपूर्ण फसल है। बरसीम की बहु-कट प्रकृति और उच्च पुनर्जनन क्षमता इस फसल को पूरे मौसम में उपलब्ध बेहतर गुणवत्ता वाले हरे चारे के उच्च उत्पादन के लिए उपयुक्त बनाती है। अनाज और अन्य फसलों की तुलना में इन फसलों का गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन बहुत कठिन होता है, जिसके लिए उच्च प्रबंधन कौशल की आवश्यकता होती है।

बरसीम को चारे की फसलों का राजा माना जाता है, यह दुनिया का लोकप्रिय पशुधन चारा है, जो भारत के लगभग 2 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्रों में नाइट्रोजन-निर्धारण, वार्षिक, पौष्टिक और बहु-कट चारा फसल के लिए जाना जाता है। फसल-चक्र में बरसीम को शामिल करने से मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि, मिट्टी की गुणवत्ता, जल निस्पंदन, बाद की फसलों में कम रोग की घटना, खरपतवार की आबादी में कमी और कार्बन पृथक्करण सहित कई लाभ मिलते हैं। बरसीम की खेती के तहत भारत सबसे पहले स्थान पर है, उसके बाद मिस्र (1.1 मिलियन हैक्टेयर) और पाकिस्तान (0.71 मिलियन हैक्टेयर) है। उच्च गुणवत्ता प्रोटीन और लम्बे समय (नवम्बर-मई) के लिए हरे चारे की उपलब्धता ने इसे चारे की फसलों का राजा बना दिया है। बरसीम के चारे में 17-21 प्रतिशत प्रोटीन, 12-15 प्रतिशत शुष्क पदार्थ और 65-75 प्रतिशत पाचनशीलता होती है। यह औसतन 20 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़ मिट्टी में स्थिर करता है और मिट्टी उर्वरता बढ़ाता है। बरसीम की अधिक उपज प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित सस्य क्रियाओं को अपनाने की आवश्यकता है :

भूमि की आवश्यकता : बरसीम बीज दोमट मिट्टी पर, अम्लता और लवणता से मुक्त, पी.एच. 7 से 8 पर बोया जाना चाहिए। मिट्टी में सिंचाई की अच्छी सुविधा होनी चाहिए और जल निकासी अच्छी होनी चाहिए।

खेत की तैयारी : खेत की 2-3 बार गहरी जुताई करें और सुहागा लगा कर समतल करें। उच्च उपज के लिए समतल खेत एक समान उपजाऊ भूमि, खरपतवार प्रजातियों और अन्य पौधों से मुक्त करना बहुत आवश्यक है।

बुवाई का समय : बरसीम को चारे के रूप में उपयोग करने के लिए इसे अक्तूबर महीने में उगाया जाना चाहिए ताकि हमें अधिक कटाई मिल सके। यदि इसे अक्तूबर के बाद उगाया जाता है, तो हमें चारे की कम उपज प्राप्त होगी।

बीज और बुवाई : बुवाई के लिए 8-10 किलो बीज की मात्रा का उपयोग करें। हमेशा सभी मानकों का विश्लेषण करके विश्वसनीय स्त्रोतों से बीज खरीदें, जो अंततः हमारे लिए बेहतर उपज की गारंटी देगा। पहली कटाई में अधिक उपज प्राप्त करने के लिए बरसीम के साथ आधा किलो गोभी सरसों उगाई जा सकती है, अन्यथा उच्च उपज सुनिश्चित करने के लिए 10 किलो जई बरसीम के साथ उगाई जा सकती है। बरसीम की बुवाई पानी से भरे खेत में बीजों को फैला कर की जाती है, लेकिन इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इस दौरान हवा का प्रवाह ना हो।

बीज का उपचार और इसका सही तरीका : बरसीम को पहली बार उगाने के दौरान एक विशेष प्रकार के जैव उर्वरक की आवश्यकता होती है, जो इसके विकास के लिए बहुत उपयोगी है एवं अहम् भूमिका निभाता है। यह जैव उर्वरक क्षेत्र के कृषि विकास अधिकारी एवं सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय में उपलब्ध है। जैव उर्वरक का एक पैकेट 10 रुपए में उपलब्ध है, जो एक एकड़ बरसीम बीज के उपचार के लिए पर्याप्त है। 100 ग्राम गुड़ लेकर आधा लीटर पानी में घोल कर उसमें एक पैकेट बायोफर्टिलाइज़र डाल कर मिला लें। इसे 8-10 किलो बरसीम बीज के उपचार के लिए प्रयोग करें और इस बात का ध्यान रखें कि इसे सभी बीजों पर अच्छी तरह और समान रूप से लगाया जाए। उपचार के बाद इस उपचारित बीज को छाया में रख कर सुखा लें।

उर्वरक प्रबंधन : बरसीम की वृद्धि और विकास के लिए उर्वरक बहुत महत्वपूर्ण है। नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाशियम पौधों के लिए आवश्यक प्राथमिक पोषक तत्व हैं। बुवाई से पहले एक एकड़ बरसीम 10 किलो नाइट्रोजन और 28-30 किलो फास्फोरस उर्वरक की आवश्यकता होती है (जिसकी आपूर्ति 22 किलो यूरिया और 175 किलो सिंगल सुपर फास्फेट से होती है)।

सिंचाई प्रबंधन : बरसीम में पहली सिंचाई महत्वपूर्ण है और अच्छी फसल के लिए इसे जल्दी उगाना चाहिए। पहली सिंचाई हल्की मिट्टी में 3-5 दिनों के भीतर और भारी मिट्टी में 6-8 दिनों में बुवाई के बाद की जा सकती है। उसके बाद इसे अक्तूबर-नवम्बर के दिनों में 10-12 दिनों के अंतरावधि, दिसम्बर से फरवरी के दौरान 15-20 दिनों के भीतर और मार्च से मई तक 10-12 दिनों के अंतरावधि में सिंचाई अवश्य करें। प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई अवश्य करें।

कटाई प्रबंधन : बरसीम में, चारे के लिए पहली कटाई बुवाई के लगभग 50 दिनों में तैयार हो जाती है और बाद में सर्दियों के दौरान 35-40 दिनों में और बसंत में 25-30 दिनों के अंतराल पर कटाई की जाती है, इस प्रकार कुल 6-7 कटाई होती है।

बरसीम के हानिकारक कीट और उनका प्रबंधन :

काली चींटी : काली चींटी अंकुरण से पहले ही बीज निकाल ले जाती है, इसलिए इनकी कॉलोनियों को ढूंढ कर, 2 प्रतिशत मिथाइल पैराथियान का छिड़काव करके इन्हें नियंत्रित किया जा सकता है।

शेष पृष्ठ 8 पर

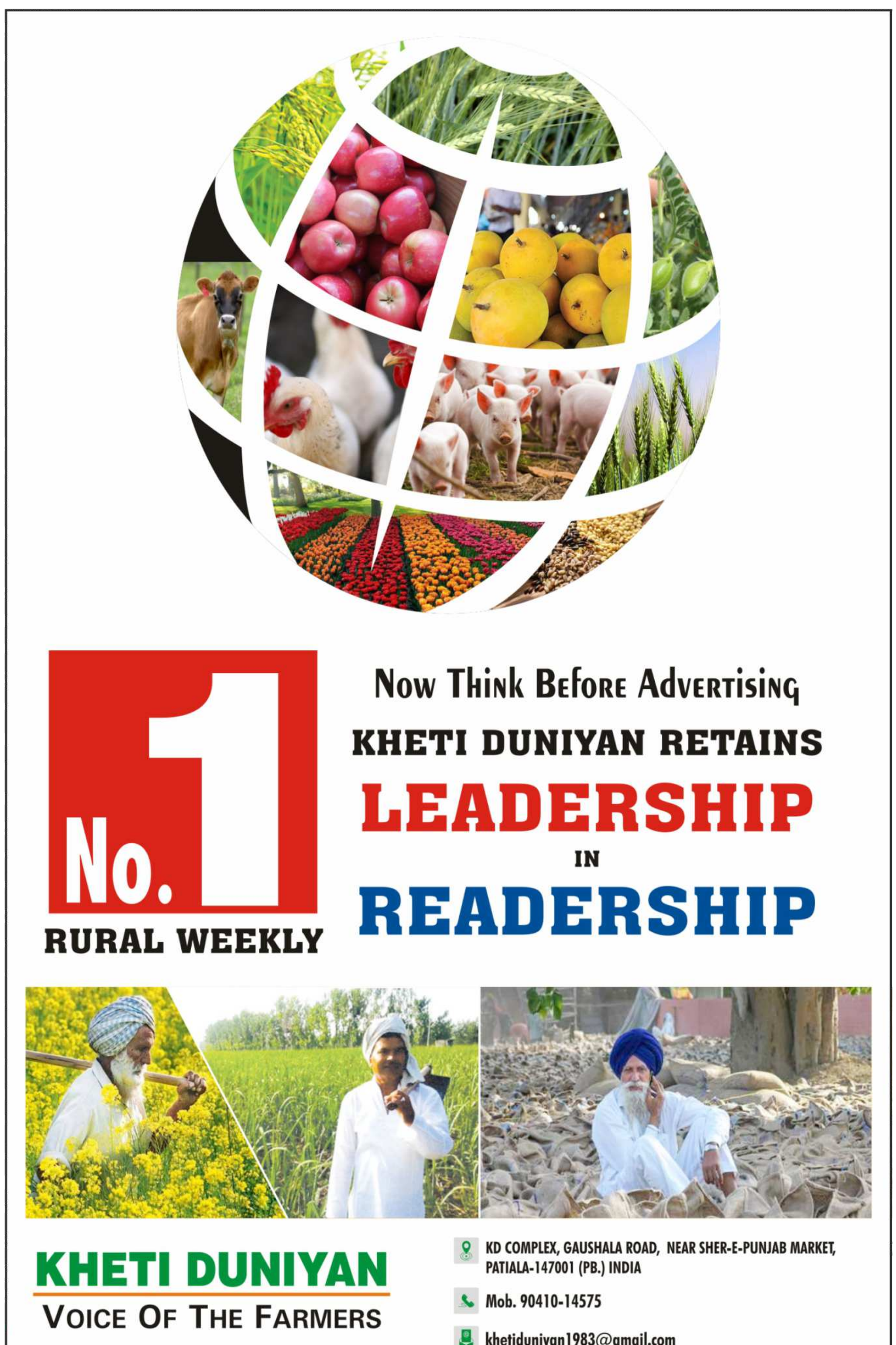

उत्पादकता वृद्धि में फसल चक्र का महत्व

अलग-अलग तरह की फसलों को किसी निश्चित क्षेत्र पर, एक निश्चित क्रम से किसी निश्चित समय में बोने को फसल चक्र कहते हैं। इसका उद्देश्य यह है कि इससे आपकी भूमि की जैविक, रासायनिक और भौतिक दशाओं में संतुलन आता है और आपकी फसलों की गुणवत्ता और पोषकता भरपूर मात्रा में मिलती हैं। इस विधि के अंतर्गत एक विशेष खेत में नियमित सांचे व श्रेणी के अंदर उगने वाली वार्षिक और द्विवार्षिक फसलों की जातियों और कुलों को आपस में बदल दिया जाता है। ऐसा करने से खरपतवार बीमारियां व कीटों चक्र टूट जाता है और मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ने लग जाती है। इसके अलावा मिट्टी में कार्बन तत्वों की मात्रा भी बढ़ जाती है और

आपकी भूमि में बिना किसी रसायन के उपयोग से अच्छी से अच्छी फसल उग सकती है।

फसल चक्र क्या है :- किसी निश्चित क्षेत्र पर निश्चित अवधि के लिए भूमि की उर्वरता को बनाये रखने के उद्देश्य से फसलों को अदल-बदल कर उगाने की क्रिया को फसल चक्र या सस्य आवर्तन या सस्यचक्र या क्रॉप रोटेशन कहते है। अथवा किसी निश्चित क्षेत्र में एक नियत अवधि में फसलों को इस क्रम में उगाया जाना कि उर्वरा शक्ति का कम से कम ह्रस हो फसल चक्र कहलाता है।

फसल चक्र के उद्देश्य क्या है :- इसका उद्देश्य पौधों के भोज्य तत्वों का सदुपयोग तथा भूमि की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशाओं में संतुलन स्थापित करना है। फसल चक्र का जैविक खेती में भूमि की उर्वरता एवं खाद्य पदार्थो की शुद्धता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

फसल चक्र क्यों आवश्यक है :- किसी खेत में लगातार एक ही फसल उगाने के कारण कम उपज प्राप्त होती है तथा भूमि की उर्वरता खराब होती है। भारत के अनेक भागों में प्रचलित सबसे लोकप्रिय फसल उत्पादक प्रणाली धान, गेहूं, मृदा-उर्वरता के टिकाऊपन के खतरे का स्पष्ट आभास कराती प्रतीय हो रही है। इसके कारण उपजाऊ सूक्ष्म जीवों की कमी, मित्र जीवों की संख्या में कमी, हानिकारक कीट पतंगों का बढ़ावा, खरपतवार की समस्या में बढ़ोत्तरी, जलधारण क्षमता में कमी, भूमि के भौतिक, रासायनिक गुणों में परिवर्तन, क्षारीयता में बढ़ोत्तरी, भूमिगत जल का प्रदूषण, कीटनाशीयों का अधिक प्रयोग तथा नाशीजवों में उनके प्रति प्रतिरोधक क्षमता का विकास आदि हानियां होती है। आज न तो केवल उत्पाद वृद्धि रूक गई है, बल्कि एक निश्चित मात्रा में उत्पादन प्राप्त करने के लिए पहले की अपेक्षा न बहुत अधिक मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग करना पड़ रहा है, क्योंकि भूमि में उर्वरक क्षमता उपयोग का ह्रास बढ़ गया है। इन सब विनाशकारी अनुभवों से बचने के लिए हमें फसल चक्र, फसल संघनता के सिद्धांतों को दृष्टिगत रखते हुए फसल चक्र में दलहनी फसलों से एक टिकाऊ फसल उत्पादन प्रक्रिया विकसित होती है।

फसल चक्र को प्रभावित करने वाले कारक

जलवायु संबंधी कारक :- जलवायु के मुख्य कारक तापक्रम, वर्षा, वायु एवं नमी है। यही कारक जलवायु को प्रभावित करते है, जिससे फसल चक्र की प्रभावित होता है। जलवायु के आधार फसलों को तीन वर्गो में मुख्य रूप से बांटा गया है जैसे-खरीफ, रबी एवं जायद।

भूमि संबंधी कारक :- भूमि संबंधी कारकों में भूमि की किस्म, मृदा उर्वरता, मृदा प्रतिक्रिया, जल निकास, मृदा की भौतिक दशा आदि आते है। ये सभी कारक फसल की उपज पर गहरा प्रभाव डालते है।

सिंचाई के साधन :- सिंचाई जल की उपलब्धता के अनुसार ही फसल चक्र अपनाना चाहिए।

किसान की आर्थिक दशा :- किसानों की आर्थिक स्थिति का भी फसल चक्र पर प्रभाव पड़ता है। किसान के पास पूंजी एवं संसाधनों की उपलब्धता के अनुसार ही फसल चक्र अपनाना चाहिए।

बाजार की मांग :- बाजार की मांग के अनुरूर फसलें ली जानी चाहिए। जैसे-शहर के नजदीक वाली भूमिओं में साग-सब्जी वाली फसलों को प्राथमिकता देना चाहिए।

प्रक्षेत्र से बाजार की दूरी :- व्यापाकि दृष्टि से ली गई फसलों के लिए यह आवश्यक है कि बाजार प्रक्षेत्र के पास होना चाहिए।

आवागमन के साधन :- आवागमन के समुचित साधन उपलब्ध होने से फसल चक्र में सुविध के अनुसार फसलों का समावेश करना चाहिए।

श्रमिकों की उपलब्धता :- कृषि में श्रमिकों का मुख्य कार्य होता है। यदि श्रमिक आसानी से व पर्याप्त संख्या में उपलब्ध है तो संघन फसल चक्र अपनाया जा सकता है तथा फसल चक्र में नगदी फसलों को समावेशित लाभ लिया जा सकता है।

खेती का प्रकार :- यदि खेती का मुख्य अंग पशु पालन है तो ऐसी जगह चारे वाली फसलें ली जायें।

किसान की घरेलू आवश्यकताएं :- किसान को अपनी घरेलू आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर फसल चक्र अपनाना चाहिए।

सामाजिक रीति-रिवाज :- फसलों के चुनाव पर सामाजिक विचारों का भी प्रभाव पड़ता है जैसे-प्याज, लहसुन का सेवन न करने वाले किसान उन्हें उगाना नही चाहेंगे।

राजकीय नियंत्रण :- तम्बाकू, अफीम एवं भांग आदि की खेती पर आबकारी कर लगता है और अधिकांश लाभांश सरकार को देना पड़ता है। इस कारण इन फसलों को किसान अपने फसल चक्र मे नहीं लगाना चाहेंगे। इस प्रकार प्रत्येक राज्य में वहां की जलवायु एवं भूमि परिस्थिति के अनुसार अलग-अलग फसल चक्र अपनाये जा सकते हैं। फसल चक्र का जैविक खेती में भूमि की उर्वरता एवं खाद्य पदार्थो की शुद्धता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

फसल चक्र के सिद्धांत :- फसल चक्र निर्धारण से पूर्व किसान को अपनी भूमि की किस्म, फसल किस्म, दैनिक अवश्यकताएं, लागत का स्वरूप तथा भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के उद्देश्य को ध्यान में रखना चाहिए। अत: फसल चक्र अपनाते समय निम्न सिद्धांतों का अनुसरण करना चाहिए।

* दलहनी फसलों के बाद खाद्यान्न फसलें बोयी जायें। दलहनी फसलों की जड़ों में ग्रंथियां पाई जाती है। जिनमें राईजोबियम जीवाणु पाये जाते हैं। ये वायुमंडलीय नाईट्रोजन का स्थिरीकरण करती है। उदाहरण के लिए चना मक्का, अरहर गेहूं, मेथी, कपास, मूंग, गेहूं, लोबिया, ज्वार आदि। इस हेतु रबी खरीफ या जायद में से किसी भी ऋतु में दलहनी फसल अवश्य लेना चाहिए।

* गहरी जड़ वाली फसल के बाद उथली जड़ वाली फसल लगानी चाहिए। इसके विपरीत ऐसा करने मिट्टी की विभिन्न परतों में पोषक तत्वों, पानी एवं लवणों का समुचित उपयोग हो जाता है। जैसे कपास-मेथी, अरहर, गेहूं, चना, धान आदि।

* अधिक पानी चाहने वाली फसल के बाद कम पानी चाहने वाली फसल, फसल चक्र में कम सिंचाई चाहने वाली फसल एवं अधिक सिंचाई चाहने वाली फसल को एक क्रम में उगाना चाहिए। जैसे गन्ना, जौं, धान, चना या मटर आदि।

* अधिक पोषक तत्व चाहने वाली फसल के बाद कम पोषक तत्व चाहने वाली फसलें उगायें। जैसे आलू, लोबिया, गन्ना, गेहूं, आलू, कद्दूवर्गीय।

* अधिक कर्षणा क्रियायें परिष्करण या निराई-गुड़ाई चाहने वाली फसल के बाद कम कर्षण क्रियायें चाहने वाली फसल उगाना, इस प्रकार के फसल चक्र से मृदा की संरचना ठीक बनी रहती है एवं लागत में भी कमी आती है। जैसे मक्का, चना, आलू, प्याज, गन्ना, मूंग।

* दो-तीन वर्ष के फसल चक्र में खेत को एक बार खाली या पड़ती छोड़ा जाये। फसल चक्र में खेत में पड़ती छोड़ने से भूमि का उर्वरता में हो रहे लगातार ह्रास से बचा जा सकता है तथा अधिक पोषक तत्व चाहने वाली फसल से पूर्व खेत को एक बार खाली अवश्य छोड़ना चाहिए। जैसे मक्का, गेहूं, मूंग, ज्वार, चना पड़ती गेहूं 3 वर्षीय फसल चक्र।

* दूर-दूर पंक्तियों में बोयी जाने वाली फसल के बाद घनी बोई जाने वाली फसल उगानी चाहिए। वर्षा के दिनों में संघन एवं भूमि को आच्छदित करने वाली फसल लगाने से मृदा क्षरण कम होता है। जबकि दूर-दूर पंक्तियों में बोई गई, फसल से मिट्टी का कटाव अधिक होता है। अत: ऐसी फसलों का हेरफेर होना चाहिए, जिससे मृदा कटाव एवं उर्वरता ह्रास को रोका जा सके। जैसे-सोयाबीन गेहूं।

* दो तीन वर्ष के फसल चक्र में खरीफ में हरी खाद वाली फसल ली जाये इस प्रकार के फसल चक्र से भूमि उर्वरा शक्ति बनी रहती है, जो कि भूमि ये वायुमंडलीय नाईट्रोजन का स्थिरीकरण करती है। हरी खाद के द्वारा भूमि में 40-50 कि.ग्रा. नाईट्रोजन प्रति हैक्टेयर स्थिर होती है। इसके लिए सनई, ढैंचा, मूंग, उड़द आदि फसलों का उपयोग किया जा सकता है।

* फसल चक्र में साग-सब्जी वाली फसल का समावेश होना चाहिए अत: इसके लिए खरीफ, रबी या जायद की फसलों में से एक फसल सब्जी वाली होनी चाहिए। जैसे, आलू, प्याज, बैंगन, टमाटर आदि।

* फसल चक्र में तिलहनी फसल का समावेश होना चाहिए। घर की आवश्यकता को ध्यान में रखने हुये ऐसा फसल चक्र तैयार करना चाहिए जिसमें एक फसल तेल वाली हो। जैसे-सरसों, मूंगफली, तिल आदि।

क्रमशः

बीज कानून पाठशाला

सीड पालीमर या सीड पारलर

आर.बी. सिंह, एरिया मैनेजर (सेवानिवृत), नेशनल सीड्स कारपोरेशन लिमिटेड (भारत सरकार का संस्थान), सम्प्रति – 'कला निकेतन', ई–70, विथिका 11, जवाहर नगर, हिसार–125001 (मो. 94667–46625)

उपचार के नाम पर कवकनाशी, कीटनाशी रसायनों को लगाने के लिए पालीमर का उपयोग किया जाता है दलील यह है कि यह कीट एवं कवकनाशी उपचार सामग्री को बीज सतह पर लेपन करता है, जिससे कीट एवं कवकनाशी का शत प्रतिशत उपयोग ले सकें। वास्तविकता यह है कि रसायन के लेपन का बहाना है बल्कि पालीमर के उपयोग का मुख्य उद्देश्य बीज को विभिन्न रंगों में रंग कर बाहरी आकृति को आकर्षक बनाना है यानि बीज को ब्यूटी पारलर लेकर जाना है।

बीज कृषक की जान है, इस पर फसल की उत्पादकता निर्भर करती है इसलिये बीज को गुणवत्तायुक्त रखने के लिये पवित्र पुनीत एवं पावन बनाने से पूर्व बीज का श्रोत एवं अन्य दस्तावेज पुष्टि करने के बाद खड़ी फसल का निरीक्षण कर अनुवांशिक शुद्धता की जांच कर रा-सीड को मशीनों से गुजार कर कचरा, हल्के बीज, कटे दाने, बारीक मिट्टिकण दूर कर दाने को बीज का रूप दिया जाता है। प्रमाणीकरण ऐसी विधा है जिसका पालन कर दाने को बीज का रूप दिया जाता है। उपरोक्त प्रक्रिया करने के बाद आजकल बीज उत्पादक बीज के रंग में एक रूपता लाने के लिये SORTEX मशीन से गुजारते हैं, उसके बाद बीज का उपचार किया जाता है।

1. पालीमर बनाम ब्यूटी पारलर : उपचार के नाम पर कवकनाशी, कीटनाशी रसायनों को लगाने के लिए पालीमर का उपयोग किया जाता है दलील यह है कि यह कीट एवं कवकनाशी उपचार सामग्री को बीज सतह पर लेपन (Coating) करता है, जिससे कीट एवं कवकनाशी का शत प्रतिशत उपयोग ले सकें। वास्तविकता यह है कि रसायन के लेपन का बहाना है बल्कि पालीमर के उपयोग का मुख्य उद्देश्य बीज को विभिन्न रंगों में रंग कर बाहरी आकृति को आकर्षक बनाना है यानि बीज को ब्यूटी पारलर लेकर जाना है।

2. आकर्षक बनाना : एक चलन निकल चुका है कि बीज को पालीमर लगा कर आकर्षक बनाया जाए। ऐसे कार्यों की शुरूआत पहले बड़ी कम्पनियां करती हैं और उनको देखकर सभी कम्पनियां पालीमर का उपयोग करने लगती है। यह बीज के बाह्य आकार को आकर्षित कर प्रस्तुत करना है। जैसे एक स्त्री अपने आप को अधिक सुन्दर दिखने के लिये सौंदर्य प्रसाधन का उपयोग करती है, उसी प्रकार बीज को पोलीमर से उपचारित किया जाता है। दलील दी जाती है कि पालीमर से अंकुरण बढ़ता है। बाह्य वातावरण के घर्षण को सह लेता है आदि। सब अर्थहीन है और पालीमर से लेपन बन्द होना चाहिए।

3. वास्तविकता को छुपाना : पोलीमर लेपन से बीज की वास्तविकता छुप जाती है। किस्म

की पहचान में बीज का रंग और टैक्सचर (Texture) मुख्य कारक होते हैं और पालीमर लेपन से ये दोनों गुण छुप जाते हैं, किस्म की पहचान लुप्त हो जाती है और कानून की दृष्टि से पालीमर से लेपन बन्द होना चाहिए। पोलीमर लिपित कपास बीज में खड़ी फसल में कीट ग्रसित बीज का दोष छिप जाता है। इसी प्रकार मूंग में पीला मूंग वायरस का पीलापन, पानी से प्रभावित बीज की चमक, बदरंग, गेहूं का करनाल बन्ट, धान का बन्ट, सरसों में पीले, लाल दाने, ग्वार में काले दाने, कच्चे दाने आदि ऐब छुप जाते हैं। अतः पालीमर का उपयोग नहीं होना चाहिए।

4. बीज कानूनों में समावेश नहीं : बीज व्यापारियों ने स्वयं ही गलाकाट प्रतियोगिता के चलते अपने आप को अति आधुनिक दिखने की आड़ में पालीमर लेपन की पद्धति अपना ली, जबकि बीज कानून निर्मात्री संस्था केन्द्रीय बीज कमेटी ने अभी तक पोलीमर लेपन की कोई अनुशंसा नहीं की है। कृषि विभाग का अभी तक इस बारे ध्यान ही नहीं गया है कि यह कितना घातक है।

5. कीट रोधी रसायन से उपचार : पोलीमर लेपन के पक्षधर अवश्य आपत्ति उठायेंगे कि कार्बन्डाजिम, रैक्सिल, कारबोक्सिन आदि फंफूदीनाशक रसायनों से उपचारित करवाने से भी बीज का रंग एवं टैक्सचर छुप जायेंगे। अवश्य छुपेंगे और बीज को उनसे भी उपचारित नहीं करना चाहिए बल्कि रसायन का एक पैकेट बीज पात्र में रखना चाहिए और ऐसी सूचना साथ दें कि किसान रखे गये रसायन से बीज बोने से पूर्व बीज उपचारित कर ले।

6. शेष उपचारित बीज का निस्तारण विधि सम्मत नहीं : शेष उपचारित बीज के अनेकों रंग-बिरंगे ढेर मण्डियों में विक्रय के लिए लगे रहते हैं। ये सभी पालीमर उपचारित बीज था, जो सीजन में नहीं बिक सका। पालीमर भी एक रसायन द्वारा निर्मित उपचार है। इसी प्रकार राज्य बीज प्रमाणीकरण संस्थाएं भी आधार बीज या कभी-2 प्रमाणित बीज अगले वर्ष बीजोत्पादन के लिए तथा कभी-2 प्रमाणित बीज व्यापारिक उपयोग के लिये प्रमाणित बीज उत्पादक (CSP) की मर्जी पर उपचारित करती है परन्तु इनका शेष बीज मण्डियों, पशुचारे, या मनुष्यों के आटे के उपयोग के लिये बेचा जाता है। यह शेष बीज (Remainent Seed) भारत सरकार के पत्र 17-11/87-S.D.-IV दिनांक 03.03.1988 के अनुसार राज्य कृषि अधिकारियों की उपस्थिति में गैर पशुराशन एवं गैर भोजन उपयोग के लिये करते हैं। अभी तक सरकारी निजी संस्थाएं, राज्य बीज प्रमाणीकरण संस्थायें, राज्य मार्केट कमेटी, बीज निरीक्षक, राज्य बीज निगमें आपत्ति नहीं उठा रही बल्कि खरीदार से 10/- रुपये के Non-Judicial Stamp Paper पर हल्फनामा लेकर कि मैं अपनी मर्जी और जोखिम पर उपचारित बीज खरीद रहा हूं, यह बीज बेचती है। उपचारित बीज के लिये स्टाम्प पेपर पर लिख कर लेने पर विक्रय कर अपने दायित्व की इतिश्री कर देते है। परन्तु जिस दिन कोई दुर्घटना होगी, उस दिन बीज कानून के रखवालों को कोई नहीं पूछे, बल्कि इन बीज उत्पादकों/विक्रेताओं पर ही कानून का पालन न करने की गाज गिरेगी। किसान को पालीमर के अवगुणों का पता नहीं है, तो बीज व्यापारियों का कर्त्तव्य बनता है कि किसानों की कम समझ का फायदा न उठाएं।

किसानों के हित में जारी

बीजोपचार

अच्छी फसलों का मूल आधार

बीजोपचार के लाभ

★ अधिक अंकुरण

★ अधिक प्रबल पौधे

★ आरंभिक बिमारियों का प्रभावी नियंत्रण

★ स्वस्थ पौधों की संख्या ज्यादा

देश के सभी किसान, पढ़ें होकर होशियार

अच्छी पैदावार तभी होगी, जब बीजों का हो सही उपचार

पक्षी भी यात्रा की पूरी तैयारी करते हैं

प्रति वर्ष ज्यों ही मौसम परिवर्तन होने लगता है, त्यों ही विभिन्न प्रजाति के पक्षियों के बीच यह तय होने लगता है कि वर्तमान स्थान पर रहना चाहिए अथवा नहीं। अनुकूल स्थान पर बच्चा जनने, भोजन की सुविधापूर्वक प्राप्ति आदि ऐसे कारण हैं, जो लाखों पक्षियों को इस प्रकार से सोचने पर विवश कर देते हैं।

पक्षियों के बीच व्याप्त ऐसी धारणा के कारण ही प्रारम्भ हो जाता है उनका सामूहिक पलायन। इस दौरान वे प्राय: 3 से 6 माह तक के लिए अपने मूल स्थान से गमन कर जाते हैं। पक्षियों द्वारा इस प्रकार से स्थान परिवर्तन को ही पक्षी प्रवाह कहा जाता है।

पक्षियों का सामूहिक पलायन मुख्यत: दो रूपों में होता है आंशिक पलायन और पूर्ण पलायन। प्रथम पलायन के अंतर्गत कैफीन, काली चिड़िया, यूरोपियन-कोयल आदि प्रजातियों के पक्षी शामिल हैं, जो अपने जन्म स्थान को तो छोड़ देते हैं, किन्तु वहां से कुछ किलोमीटर की दूरी पर उसके इर्द-गिर्द ही शीतकाल में निवास करते हैं। उल्लेखनीय बात यह है कि इस तरह के प्रवास में मुख्य रूप से युवा तथा मादा पक्षी ही बड़े पैमाने पर भाग लेते हैं।

आनुवांशिक गुणों के कारण पक्षियों में यह बात पूर्व से ही निर्धारित रहती है कि कब प्रवास यात्रा प्रारम्भ हो जाए, यात्रा की दूरी तथा दिशा क्या होगी और क्रम में कहां एवं कितना पड़ाव देना चाहिए।

जिस प्रकार की तैयारी के साथ मनुष्य लम्बी यात्रा पर निकलता है, ठीक उसी प्रकार की तैयारी प्रवास-क्रम के दौरान पक्षी जगत के बीच भी देखी जाती है। इन तैयारियों के अन्तर्गत भोजन, मौसम, उड़ने की ऊंचाई तथा मार्ग आदि का निर्धारण प्रमुख होता है। ये यात्रा पर निकलने के दो-तीन सप्ताह पूर्व से ही अपने शरीर के विभिन्न भागों - गला, आंत एवं त्वचा में वसा को आवश्यकता अनुसार इकट्ठा कर लेते हैं, जो उड़ने के क्रम में ऊर्जा एवं भोजन प्रदान करने का कार्य करता है।

अध्ययनों द्वारा पता चलता है कि पक्षी प्रस्थान करने के लिए ऐसे मौसम को अनुकूल मानते हैं, जिससे उन्हें स्पष्ट दिखाई देने के साथ-साथ हवा का रुख भी उनकी पलायन दिशा की ओर तथा मौसम का तापमान 10 डिग्री से अधिक ना हो ताकि उड़ान के समय उनको अधिक पानी की आवश्यकता ना पड़े। अधिकतम ऊंचाई पर उड़ान भरने का अभी तक का रिकॉर्ड विभिन्न प्रजाति के समुद्री पक्षियों का नाम दर्ज है, जो 6000 मीटर तक के ऊंचाई एक सामूहिक रूप में करूज मिसाल की भांति आकृति बना कर बढ़ाते हुए देखे गए हैं।

जिस प्रकार विभिन्न किस्म के हवाई जहाज़ों की गति सीमा निर्धारित होती है, उसी प्रकार पलायन-यात्रा के दौरान विभिन्न प्रजाति के पक्षियों की भी उड़ान-गति तथा दूरी निर्धारित है। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार बत्तख तथा गाने वाली चिड़िया आदि की उड़ान गति प्रति घंटा 30 से 80 किलोमीटर के बीच होती है। रेड-नॉट पक्षी उत्तरी-दक्षिण समुद्र तट से नार्वे तक की लगभग 1800 किलोमीटर की दूरी दो दिन में पूरी करते हैं। टर्न-स्टोन नामक पक्षी तीन दिन में आर्कटिक प्रदेश से लेकर हवाई द्वीप तक की करीब 4500 किलोमीटर की दूरी तय करते हैं, जबकि आकर्टिक टर्न उत्तरी अक्षांश से लेकर अंटार्कटिका क्षेत्र के बीच में यात्रा के दौरान 10,000 किलोमीटर तथा अपने पूरे जीवन काल के दौरान वे लगभग 1,00,000 किलोमीटर की दूरी तय करते हैं। वैज्ञानिकों द्वारा पक्षियों की उड़ान-गति शांत हवा में निर्धारित की जाती है।

पक्षियों के इस वार्षिक प्रवास-क्रम के दौरान सबसे रोचक बात यह होती है कि वे अपने गंतव्य की ओर प्रस्थान करते हैं, तो उनके दिमाग में मार्ग का पूरा-पूरा मानचित्र हमेशा के लिए अंकित हो जाता है। इस रहस्य पर से पर्दा उठाने के लिए पक्षी वैज्ञानिक ने एक प्रयोग किया। सारिका तथा मैना प्रजाति के कुछ पक्षियों, जो हालैंड से फ्रांस जाने के लिए उड़ानें भर रहे थे, को वैज्ञानिकों ने पकड़ कर स्विट्ज़रलैंड भेज दिया। कुछ दिन बाद जब उनको मुक्त किया तो उनमें से वयस्क पक्षी तो वापस अपनी मंजिल पर पहुंच गए, जबकि युवा पक्षी स्विट्ज़रलैंड के ही इर्द-गिर्द भटक गए।

सर्वप्रथम जर्मनी के हेलिगौलैड में ही 19वीं सदी में पक्षी वैज्ञानिक हेनरिक गेटके ने एक पक्षी वैद्यशाला की स्थापना की। पुन: विभिन्न देशों के पलायित पक्षियों की पहचान के लिए डेनमार्क के वैज्ञानिक माटेसेन ने नाम एवं पता लिखी एल्यूमीनियम की मुद्रिका परिंदों के पैरों में पहनाने की प्रथा शुरू की।

शेष पृष्ठ 5 की

बरसीम की वैज्ञानिक खेती एवं गुणवत्ता बीज...

सतही टिड्डा : अप्रैल माह में बरसीम की फसल पर इस कीट का प्रकोप तेज़ी से होता है। इस समय 90 प्रतिशत कीट अन्य फसल के खेतों से आते हैं और बरसीम पर हमला करते हैं। 400 मिलीलीटर मैलाथियान / सायथियोन / मेल्टाफ / मेलामार (50 ई.सी.) को 300 लीटर पानी में मिला कर एक एकड़ में छिड़काव करें।

यदि बरसीम को केवल बीज के लिए उगाया जाता है, तो इस कीट का नियंत्रण मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत धूड़े (10 किलोग्राम प्रति एकड़) से करना चाहिए। यदि बरसीम को केवल चारे के लिए उगाया जाता है, तो इस कीट को मैलाथियान से नियंत्रित किया जाना चाहिए और हरा चारा जानवरों को खिलाने के लिए छिड़काव के 10 दिन बाद लेना चाहिए।

बरसीम के रोग और उनका नियंत्रण

तना गलन रोग : फफूंद जो बीज या मिट्टी में रहती है, तने के निचले हिस्से पर हमला करती है, जिसके परिणामस्वरूप तना सड़ जाता है। यह सफेद कपास की तरह माइसेलियम बनाता है, जो भूमि पर उपलब्ध सड़े हुए पदार्थों पर बढ़ता है।

बुवाई से पहले रोग मुक्त खेत का चयन कर इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। जहां इसका प्रकोप अधिक हो, वहां 2-3 साल का फसल-चक्र अपनाएं और हरियाणा बरसीम-1 और हरियाणा बरसीम-2 जैसी प्रतिरोधी किस्मों को भी अपनाएं। जहां भी यह रोग दिखाई दे, संक्रमित पौधों को काट लें या हटा दें, ताकि यह सूर्य के प्रकाश के सम्पर्क में आ सकें। 0.1 प्रतिशत बाविस्टिन (1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से) घोल का प्रयोग करें और सिंचाई करें।

बरसीम के गुणवत्ता बीज उत्पादन की तकनीक : बरसीम बहु-कट फसल के रूप में उगाई जाती है, पहले हरे चारे को काटा जाता है और बाद में बीज उत्पादन के लिए प्रबंधित किया जाता है। फूल, बीज भरने और परिपक्वता के दौरान प्रतिकूल मौसम की स्थिति के कारण अनिश्चित और कम बीज सेटिंग के कारण किसान चारा बीज उत्पादन में अधिक रुचि नहीं लेते हैं। चारा फसलें शर्मीली सीडर हैं और जानवरों को खिलाने के लिए बीज सेटिंग से पहले काटी जाती हैं। बरसीम 3-4 कटों के बाद बीज पैदा करता है, लेकिन बीज विकास के लिए लगभग दो महीने की आवश्यकता होती है और प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई और उर्वरक का उपयोग बेहतर पुनर्जनन के लिए फायदेमंद और महत्वपूर्ण होता है।

एक ही फसल किस्म के बीज को उसी भूमि के टुकड़े पर नहीं उगाया जाना चाहिए, जिस पर पिछले वर्ष एक ही किस्म की फसल उगाई गई थी, जब तक कि एक ही किस्म के बीज प्रमाणीकरण मानकों की पुष्टि ना हो। बीज के बनने और पकने के दौरान अक्सर फसल की सिंचाई की जाती है। प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई महत्वपूर्ण है। बीज उत्पादन कार्यक्रम में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बीज की गुणवत्ता को मुख्य रूप से विशेष चरणों में रौगिंग और क्षेत्र निरीक्षण द्वारा बनाए रखा जा सकता है। रूजिंग का अभ्यास बंद प्रकार और अन्य अवांछित पौधों को हटाने के लिए किया जाता है, जबकि क्षेत्र निरीक्षण निर्धारित बीज और क्षेत्र मानकों को सुनिश्चित करता है।

बरसीम की फसल दिसंबर के पहले पखवाड़े में दो कटाई के बाद बीज उत्पादन के लिए बोई जाती है, लेकिन चारे के उद्देश्य से इसे अक्तूबर-नवम्बर में बोया जा सकता है और फरवरी तक कटाई की जाती है और फिर बीज उत्पादन के लिए छोड़ दिया जाता है। बीज उत्पादन के लिए बरसीम फसल को नवम्बर या जनवरी के अंत में भी बोया जा सकता है, जिससे फसल को बीज उत्पादन के लिए छोड़ने से पहले हरे चारे की दो से तीन कटिंग प्रदान की जा सकती है। जल्दी या देर से बुवाई करने से खराब बीज उत्पादन होता है।

बरसीम की बेहतर किस्में			
किस्म का नाम	**कटाई की संख्या**	**चारा (क्विं./एकड़)**	**बीज (क्विं./एकड़)**
मेस्कावी	5-6	240-270	1.4-1.6
हिसार बरसीम-1	5-6	270-290	1.6-1.8
हिसार बरसीम-2	6-7	300-325	1.3-1.4

बरसीम एक एंटोमोफिलस क्रॉस-परागण वाली फसल है और इसमें कीड़े, विशेष रूप से मधुमक्खियां, अच्छी बीज सेटिंग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उच्च बीज उपज प्राप्त करने के लिए प्रति हैक्टेयर 3-8 मधुमक्खी कालोनियों को बीज भूखंड के पास रखा जाना चाहिए। मधुमक्खियां अच्छे परागण एजेंट के रूप में काम करती हैं। बीज के परिपक्व होने के तुरन्त बाद फसल की कटाई की जा सकती है, अन्यथा कटाई में देरी होने पर बीज की गुणवत्ता खेत में ही खराब होने लगती है। जब कटाई यंत्रवत् की जानी हो, तो बीज फसल की नमी के अनुसार मशीन को पूरी तरह से साफ किया जाना चाहिए और उसके सभी आंतरिक संचालन के लिए ठीक से कैलिब्रेट किया जाना चाहिए। कटाई और थ्रैशिंग ऑपरेशन के दौरान यांत्रिक क्षति और बीज को मिश्रण के खिलाफ पर्याप्त सावधानी बरतनी चाहिए। बीज की फसल मई के अंतिम सप्ताह या जून की शुरूआत में पक जाती है। फसल को लाठी से पीट कर या बैलों से रौंद कर काटा जाता है। बरसीम औसतन 4.5 से 5.5 क्विंटल प्रति हैक्टेयर उपज देता है। उत्पादित बीज प्रकार के लिए सही, व्यवहार्य और सस्ता है, जो फसल से अधिकतम लाभ प्राप्त करने में मदद करता है और किसान की आर्थिक स्थिति में सुधार करता है। आमतौर पर उत्पादित बीज, कटाई और थ्रैशिंग के बाद, प्रसंस्करण संयंत्रों में ले जाने से पहले नमी की मात्रा को कम करने के लिए धूप में सुखाया जाता है। बीज के सीधे सूर्य के प्रकाश के सम्पर्क में आने से बीज की गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है। इसलिए बीज को विसरित धूप की स्थिति में शेड के नीचे सुखाया जा सकता है। सुखाने का काम शुरू करने से पहले गंदगी, भूसी, मिट्टी के कणों आदि को हटाने के लिए बीज स्टॉक को पहले से साफ करने की सलाह दी जाती है। ग्रेडर के विभिन्न मॉडल का उपयोग करके बीज प्रसंस्करण निर्धारित छलनी के आकार या गुरुत्वाकर्षण विभाजक के माध्यम से किया जाना चाहिए। बीज का उपचार कवकनाशक की निर्धारित खुराक से किया जाना चाहिए और रोग पैदा करने वाले रोगजनकों और कीड़ों को बीज के साथ या उनके नए प्रवेश को नियंत्रित करने के लिए कीटनाशक का प्रयोग किया जाना चाहिए।

भविष्य की संभावना : बरसीम में बीज उत्पादन के लिए गुणवत्तापूर्ण बीज की आवश्यकता को पूरा करने के लिए बहुत ध्यान देने की आवश्यकता होती है। अधिक उपज देने वाली किस्मों को विकसित किया जाना चाहिए, क्योंकि चारा फसलों के तहत फसल क्षेत्र में वृद्धि संभव नहीं है। अनुसंधान कार्य को सुदृढ़ करने के लिए सरकार द्वारा अधिक धनराशि जारी की जानी चाहिए और बीज उत्पादन के लिए सार्वजनिक और निजी संस्थानों के बीच सामंजस्य बनाए रखा जाना चाहिए। बीज ग्राम की अवधारणा को अपनाने की आवश्यकता है और उत्पादकता व उत्पादन को बढ़ाने के लिए इसका गतिशील रूप से उपयोग किया जाना चाहिए। गुणवत्ता परीक्षण और बहुआयामी दृष्टिकोणों को बीज उत्पादक खिलाड़ियों द्वारा कदाचार की जांच करने की आवश्यकता है, किसानों के बीच विश्वास बनाया जाना चाहिए ताकि उन्हें पशुधन और अंतत: कृषि स्थिरता के लिए अपने स्वयं के बीज का उत्पादन करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके।

दिल्ली में प्रदूषण

पटाखों पर राजनीति के बजाय तार्किक समाधान निकालें

दिल्ली में दिवाली आते ही वायु प्रदूषण खतरनाक स्तर पर पहुंच जाता है। पटाखों पर प्रतिबंध के बावजूद बिक्री जारी है, जिससे आस्था, प्रशासन और पर्यावरण के बीच टकराव गहराता जा रहा है।

बीते दशक से दिल्ली में दिवाली के आसपास प्रदूषण की स्थिति खतरनाक हो जाती है और कोर्ट का मानना है कि पटाखों से प्रदूषण और अधिक बढ़ जाता है। लेकिन इस प्रकरण की अहम बात यह है कि पटाखों पर प्रतिबंध के बावजूद बिक्री में कोई कमी नहीं आती, क्योंकि प्रशासन की नाक के नीचे दुकानदार धड़ल्ले से पटाखे बेचते हैं और लोग जमकर खरीदते भी हैं।

बीते 7 अक्तूबर को दिल्ली सरकार ने कहा था कि वह सुप्रीम कोर्ट जाएगी और ग्रीन पटाखों की अनुमति लेगी। वर्ष 2019 से दिल्ली में सभी पटाखों पर बैन है और मुख्यमंत्री ने जनभावना को देखते हुए सीमित ग्रीन पटाखे चलाने की इजाजत मांगी थी। दिल्ली सरकार ने कहा है कि अगर सुप्रीम कोर्ट पटाखों से प्रतिबंध हटाता है तो वह ऐसे सभी कदम उठाने को तैयार है, जिनसे निर्देशों का पूरी तरह पालन हो सके।

पर्यावरण मंत्री मनजिंदर सिंह सिरसा ने कहा कि अगर पटाखे फोड़ने पर प्रतिबंध हटा लिया जाता है तो हम अदालत के आदेश के आलोक में आवश्यक कदम उठाने के लिए तुरंत एक बैठक करेंगे और यह सुनिश्चित करेंगे कि आदेश का पालन हो। सरकार जिन पटाखों की पैरवी कर रही है, उनके विषय में यह बताया जाता है कि ग्रीन पटाखों से सामान्य पटाखों की तुलना में 30 प्रतिशत कम प्रदूषण होता है। लेकिन कई वर्षों से पिछली आम आदमी पार्टी की सरकार न तो इसके लिए कोई ठोस काम कर पाई थी और न ही जागरूकता फैला पाई थी। इस बार बारी भारतीय जनता पार्टी की

योगेश कुमार सोनी

है, जिसे इस कसौटी पर खरा उतरना बाकी है।

आम आदमी पार्टी के समय में बीजेपी के कई बड़े नेता इस मामले को लेकर केजरीवाल को घेरते थे और कहते थे कि पटाखों पर बैन लगाना हिंदुत्व पर प्रहार है, हालांकि आदेश हर बार कोर्ट का ही होता था और अब भी कोर्ट का ही है। अब यह देखना बाकी है कि दिल्ली सरकार कितनी सक्रियता दिखाती है और किस तरह का समाधान निकालती है।

दरअसल, हम प्रदूषण को लेकर आज तक यह तय नहीं कर पाए हैं कि इसकी असली वजह क्या है। इस मामले को लेकर विशेषज्ञों की अलग-अलग राय है। कुछ कहते हैं कि सर्दियों के मौसम में प्रदूषण अपने आप बढ़ जाता है। बीते लगभग दो दशकों में दिल्ली-एनसीआर में प्रदूषण बढ़ने का सबसे बड़ा कारण यह रहा कि दिल्ली से सटे हर कोने में जितनी हरियाली थी, वहां अब बड़ी-बड़ी इमारतें बन चुकी हैं। जैसे गाजियाबाद से सटे राज नगर में लाखों फ्लैट बन चुके हैं। दूसरी ओर गुरुग्राम में जितनी हरियाली थी, आज वहां एक-एक इंच जमीन किसानों ने बेच दी और वहां भी लाखों फ्लैट बन चुके हैं। बल्कि एशिया के सबसे महंगे फ्लैट वहां बिकने लगे हैं।

वहीं तीसरी ओर लोनी बॉर्डर और चौथी ओर फरीदाबाद में भी यही स्थिति है। इसके अलावा विशेषज्ञों का मानना है कि पराली जलाना भी प्रदूषण का एक बड़ा कारण है, क्योंकि इससे हवा में हानिकारक गैसें और कण फैलते हैं, जैसे मीथेन, कार्बन मोनोऑक्साइड और पार्टिकुलेट मैटर। यह धुंध का निर्माण करता है, जो शहर की वायु गुणवत्ता को खराब करता है। पराली जलाने के कारण सर्दियों के महीनों में प्रदूषण का स्तर विशेष रूप से गंभीर हो जाता है, क्योंकि धीमी हवाएं इन प्रदूषकों को शहर के ऊपर फंसा देती हैं।

दिल्ली-एनसीआर में हर रोज सैकड़ों नए वाहन खरीदे जाते हैं, अर्थात राजधानी में अपनी क्षमता से अधिक वाहन हो चुके हैं, जो प्रदूषण बढ़ने का एक और बड़ा कारण है। पटाखों को लेकर कोर्ट की सबसे जटिल समस्या यह है कि दीपावली सर्दी के मौसम में आती है, जब दिल्ली में प्रदूषण पहले से ही बहुत अधिक होता है। कोर्ट का मानना है कि पटाखे जलाने से प्रदूषण और भी बढ़ जाता है। लेकिन प्रतिबंध के बावजूद पटाखों की बिक्री और खरीद में कोई कमी देखने को नहीं मिलती।

पटाखों पर प्रतिबंध को कुछ लोग अपनी आस्था पर चोट मानते हैं, जिसको लेकर कई हिंदूवादी संगठनों और नेताओं के बयान हर वर्ष देखने और सुनने को मिलते हैं। यह बात तय है कि दिवाली हिंदुओं के सबसे बड़े त्योहारों में से एक है और इस पर्व पर पटाखे न जलाकर त्योहार अधूरा लगता है। जब से सनातन परंपरा का उदय हुआ है, तब से यह प्रथा चली आ रही है, और उसे निभाए बिना त्योहार पूरा नहीं लगता।

सवाल यही है कि दिल्ली में इसका समाधान कैसे संभव है, क्योंकि हर वर्ष यही स्थिति दोहराई जाती है, जो त्योहार के उत्साही लोगों में कुंठा पैदा कर रही है। कोर्ट और जनता के बीच फंसा यह भावनात्मक घटनाक्रम अब निराशा का रूप ले चुका है। इसमें एक सवाल यह उठता है कि आखिर राजधानी में इतना पटाखा आ कहां से रहा है? पूर्ण रूप से प्रतिबंध होने के बावजूद इतनी बड़ी मात्रा में पटाखे किस तरह आ रहे हैं? स्थिति स्पष्ट है कि तंत्र की मिलीभगत के बिना यह संभव नहीं है। तो फिर यह ड्रामा क्यों किया जा रहा है?

बहरहाल, कोर्ट और सरकार को इसका कोई स्थायी समाधान निकालना चाहिए, जिससे लोगों के मन की कुंठा भी दूर हो और त्योहार भी मनाया जा सके।

लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।

टेरेस गार्डन में गमलों में सब्ज़ियां लगाएं

दैनिक भोजन में सब्ज़ियों का विशेष स्थान है। सब्ज़ियों द्वारा हमारे शरीर को विटामिन, खनिज लवण, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन आदि पोषक तत्व मिलते हैं। आहार वैज्ञानिकों के अनुसार हमारे भोजन में प्रति दिन 325 ग्राम सब्ज़ियां होनी चाहिए, जिसमें से 100 ग्राम पत्ते वाली सब्ज़ियां होनी चाहिए। भोजन के लिए गृह-वाटिका में ताज़ा सब्ज़ियां प्राप्त करने का एक अच्छा तरीका है। इससे खाली स्थान तथा समय एवं श्रम का भी सदुपयोग होता है। प्रति व्यक्ति प्रति दिन 35 ग्राम फल की औसत खपत है, जोकि आवश्यक मात्रा से बहुत कम है। इस कमी को पूरा करने का एकमात्र उपाय यह है कि प्रति परिवार उपलब्ध स्थान का अधिक से अधिक उपयोग करते हुए परिवार के उपयोग हेतु उत्पादन का लक्ष्य रखें, जैसे घर के आस-पास की जमीन (गृह-वाटिका) मकान की छत पर सब्ज़ियों का उत्पादन किया जाए, ताकि इसकी उपलब्धता और उपयोगिता हमारी आवश्यकता अनुरूप होती रहे। शहरों में गृह-वाटिका हेतु पर्याप्त स्थान की कमी के कारण छत पर, टेरेस गार्डन में गमलों को आसानी से छत पर, झरोखे में, धूप आने वाली जगहों पर रखा जा सकता है। ये गमले घर की सुंदरता बढ़ाने के साथ-साथ प्रदूषण नियंत्रण में भी सहायता करते हैं।

टेरेस गार्डन/गृह-वाटिका में सब्ज़ियों, फूलों तथा फलों को लगाने के लिए उन्नतशील किस्में और बुवाई के समय जैविक खाद का उपयोग करना चाहिए। यदि घर के पास अधिक ज़मीन नहीं है, तो उपरोक्त सब्ज़ियों, फूलों और फलों को गमलों आदि में भी आसानी से लगाया जा सकता है। आजकल शहरों में बहु-मंजिली आवासों की छतों पर भी लकड़ी की पेटियों, बड़े आकार के गमलों, फ्रेम आदि बना कर दैनिक भोजन में प्रयुक्त होने वाली साग-सब्ज़ियां पैदा की जा सकती हैं, जो जैविक एवं स्वास्थ्यवर्धक होती हैं।

गमलों का चुनाव : गमले, मिट्टी, सीमेंट, लकड़ी तथा प्लास्टिक आदि के हो सकते हैं। बाल्टी, टिन के बॉक्स अथवा विभिन्न प्रकार के ड्रमों का प्रयोग भी सब्ज़ियां उगाने में किया जा सकता है। इन पात्रों की तली में एक छेद अवश्य होना चाहिए, जिससे कि अनावश्यक पानी बाहर निकल सके। लकड़ी के गमलों या पात्रों पर कोलतार या पेंट पोतने से वे अधिक आकर्षक एवं टिकाऊ बन जाते हैं।

गमलों का भरना : मिट्टी, यमुना के रेत तथा अच्छी सड़ी गोबर की खाद या पत्तों की खाद को बराबर मात्रा में मिला कर मिश्रण तैयार करें तथा थोड़ी मात्रा में कार्बोरिल 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में मिलाएं। इससे चींटियों, दीमक, काटने वाले कीट, मिट्टी वाले कीटों से पौधों की सुरक्षा होती है। सबसे पहले गमले/पात्र के पैंदे में छेद के ऊपर पत्थर के टुकड़े, कंकड़ या मटके के टूटे टुकड़े रखें। इस पर 2-3 सैंटीमीटर की ऊंचाई तक मोटी रेत भर दें। इससे आवश्यकता से अधिक पानी गमले से बाहर निकल जाएगा तथा मिट्टी आदि से पैंदे का छेद बंद नहीं होगा। इसके ऊपर मिट्टी व खाद का मिश्रण भर दें। गमले को ऊपर से 1-1.5 इंच खाली रखें, जिससे कि पानी देने हेतु पर्याप्त स्थान मिल सके।

बुवाई का तरीका : सामान्यतया सब्ज़ियों के बीज सीधे ही गमलों/पात्रों में बोए जाते हैं, लेकिन टमाटर, मिर्च आदि का एक पौधा एक गमले में (12 इंच गहरे व चौड़े आकार के गमले में) बोया जाता है, जबकि लहसुन, प्याज़ के कई बीज बोए जाते हैं। भिंडी, ग्वार आदि के 2-3 बीज प्रति गमला बोए जाते हैं।

पौधों की देखभाल : पौधों को गर्मियों में रोज़ाना सुबह-शाम 2 बार पानी देना चाहिए। सर्दियों में दिन में एक बार या 2 दिन में एक बार पानी दें। वर्षा में अधिक पानी निकालने की व्यवस्था करें। इसके लिए गमलों को थोड़ा टेढ़ा करके रखने से अतिरिक्त पानी बाहर निकल जाएगा। बुवाई के 20-21 दिन बाद तथा पौध रोपण के 15-16 दिन बाद प्रति गमला 5-10 यूरिया के दाने गीली मिट्टी में दें, इससे पौधे की पैदावार में वृद्धि होती है। गमले में उगने वाले खरपतवारों को भी समय-समय पर निकालते रहें।

विभिन्न कीटों से बचाव हेतु नीम आधारित कीटनाशक अथवा जैव कीटनाशकों का प्रयोग करें। यदि रसायन का प्रयोग करना आवश्यक हो, तो मैलाथियान दवा का 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से घोल बना कर छिड़काव करें। दवा छिड़कने के 7 दिन बाद ही फलों एवं सब्ज़ियों को तोड़ें। इससे पहले फलों का उपयोग करने से, स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। पौधों के मुरझाने या जड़ गलन आदि रोग होने पर कैप्टान 2 ग्राम प्रति लीटर पानी का स्प्रे करें। मौज़ेक से ग्रसित पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। इन सभी बताई गई बातों का ध्यान रख कर आप गमलों में सफलतापूर्वक सब्ज़ियां उगा सकते हैं तथा ताज़ा सब्ज़ियों का आनन्द प्राप्त कर सकते हैं। इस तरह सब्ज़ियां उगा कर खाली समय का सदुपयोग भी किया जा सकता है। इसके साथ ही व्यवसायिक रूप से उगाई गई सब्ज़ियों में कीटनाशी रसायनों के प्रदूषण से भी खुद को बचाया जा सकता है।

छत पर/गृह-वाटिका में लगाए जाने वाले पौधों में समय-समय पर जैविक खाद एवं दवाईयों का प्रयोग करना ज़रुरी होता है। गमलों आदि में लगाई गई सब्ज़ियों में पर्याप्त नमी को बनाए रखना होता है। गमलों आदि में लगाई गई साग-सब्ज़ियों में पर्याप्त नमी के लिए विशेष ध्यान रखने की ज़रुरत होती है। अन्यथा पौधों के मुरझा जाने पर यदि पानी दिया जाएगा, तो उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। अत: आवश्यक है कि गमलों की सिंचाई ज़रुरत अनुसार की जाए। यदि ज़मीन में इसकी पैदावार की जा रही है, तो मौसम के अनुसार आवश्यकता के आधार पर सिंचाई करना आवश्यक है। टेरेस गार्डन में उगाई जाने वाली सब्ज़ियां जैसे मिर्च, शिमला मिर्च, बैंगन, टमाटर, भिंडी, मटर, मेथी, धनिया, पालक, सोयाबीन, चोलाई, लहसुन, अदरक व पूजा के लिए पुष्प जैसे गेंदा, गुलाब आदि प्रमुख हैं।

सभी सब्ज़ियां व उनकी विभिन्न किस्में गमलों में आसानी से नहीं उगाई जा सकती हैं। इसलिए गमलों हेतु उपयुक्त सब्ज़ियों एवं उनकी किस्मों को ही जानना ज़रुरी है।

किसानों की आय बढ़ाने का काम करेगी जीएसटी की नई दरें

शिवराज सिंह चौहान
केन्द्रीय कृषि व किसान कल्याण व ग्रामीण विकास मंत्री

किसान कल्याण केंद्र सरकार की सर्वोच्च प्राथमिकता है। खेती सरल हो, उत्पादन की लागत घटे और किसान को अधिक मुनाफा हो, इसके लिए निरंतर प्रयास जारी हैं। अन्नदाताओं का जीवन बदलना और कृषि को विकसित बनाना प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी का लक्ष्य भी है और संकल्प भी। उनके निर्णयों, नीतियों और योजनाओं के केंद्र में हमेशा किसान रहते है। हाल ही में जीएसटी परिषद द्वारा किए गए संशोधन इसी किसान हितैषी सोच को दर्शाते है। स्वतंत्रता दिवस पर लाल किले की प्राचीर से प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी ने जीएसटी में नेक्स्ट जेनरेशन रिफॉर्म का जो संकल्प लिया था – आज वह नए भारत की समृद्धि का आधार बन रहा है।

देश की आम जनता और किसानों के हित को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए जीएसटी दरों में व्यापक सुधार किए गए है। यह सुधार हमारी कृषि व्यवस्था को गति और किसानों को प्रगति देने वाले हैं। इन सुधारों से देश के 10 करोड़ से अधिक सीमांत किसानों को सीधा लाभ मिलेगा। पहले जहां कृषि उपकरणों पर 18 प्रतिशत तक जीएसटी देना पड़ता था, अब यह दर घटाकर केवल 5 प्रतिशत कर दी गई है। इसका मतलब है कि हर किसान की जेब में हजारों रुपये की सीधी बचत होगी।

उदाहरण के लिए, अगर कोई किसान 35 हॉर्स पावर का ट्रैक्टर खरीदता था तो पहले उसे लगभग 6.5 लाख रुपये (अनुमानित) खर्च करने पड़ते थे। अब यही ट्रैक्टर करीब 6.09 लाख रुपये में मिलेगा और किसान को लगभग 41 हजार रुपये की बचत होगी। 45 एचपी ट्रैक्टर पर करीब 45 हजार रुपये और 50 एचपी ट्रैक्टर पर 53 हजार रुपये की सीधी बचत होगी। 75 एचपी ट्रैक्टर पर किसानों को लगभग 63 हजार रुपये का लाभ होगा। सिर्फ ट्रैक्टर ही नहीं, पावर टिलर पर करीब 12 हजार, धान रोपण यंत्र पर 15 हजार और थ्रेशर पर लगभग 14 हजार रुपये की बचतहोगी। पावर वीडर और सीड-ड्रिल जैसे उपकरणों पर भी 5 से 10 हजार रुपये तक की बचत होगी। नए सुधारों से कटाई और बुवाई की बड़ी मशीनें भी किसानों को सस्ते दरों पर उपलब्ध हो सकेंगी। 14 फीट कटर बार पर लगभग 1.87 लाख रुपये, स्क्वायर बेलर पर लगभग 94 हजार रुपये और स्ट्रॉ रीपर पर करीब 22 हजार रुपये किसानों की जेब में बचेंगे। मल्चर, सुपरसीडर, हैप्पी सीडर और स्प्रेयर भी अब पहले से सस्ते हो गए है।

कृषि को अधिक लाभदायक बनाने के लिए मशीनीकरण आवश्यक है। स्प्रिंकलर, ड्रिप इरिगेशन, कटाई मशीन, हाइड्रोलिक पंप और कलपुर्जो पर टैक्स घटने से अब सीमांत किसान भी आसानी से आधुनिक उपकरण खरीद पाएंगे। इससे श्रम लागत कम होगी, समय बचेगा और उत्पादकता बढ़ेगी। खेती के खर्च में कमी आने से स्वाभाविक रूप से किसान की आमदनी में वृद्धि होगी। ये अनुमानित कीमतें हैं। कंपनियों और राज्यों की नीतियों के आधार पर थोड़ी-बहुत भिन्नता संभव है, लेकिन यह तय है कि किसानों की लागत घटेगी और फायदा निश्चित मिलेगा।

हमारा हर कदम किसानों की समृद्धि के लिए है। किसानों को घटी हुई दरों का लाभ तुरंत मिले, इसके लिए मैंने कृषि मशीन निर्माताओं के संघों के प्रतिनिधियों के साथ भी बैठक की। यह सुधार केवल किसानों के लिए नहीं, बल्कि पूरे देश की आर्थिक संपन्नता और आत्मनिर्भरता के लिए अभिनंदनीय कदम है। कृषि की लागत घटने से किसान अपनी उपज से अधिक लाभ कमा पाएंगे जिससे उनकी आमदनी में वृद्धि होगी। इसका सकारात्मक असर लघु और कुटीर उद्योगों पर भी पड़ेगा, क्योंकि उन्हें कच्चा माल सस्ते में उपलब्ध होगा और उत्पादन लागत घटेगी। साथ ही एमएसएमई क्षेत्रों को भी बढ़ावा मिलेगा और रोजगार के नए अवसर सृजित होंगे।

कृषि और पशुपालन एक-दूसरे के पूरक है। मधुमक्खी पालन, डेयरी, पशुपालन और सहकारी समितियों को जी.एस.टी. में जो छूट दी गई है, उससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था में नई समृद्धि आएगी। जब किसानों के खर्च कम होंगे और उनकी आय बढ़ेगीतो वे अपनी जीवनशैली, शिक्षा और स्वास्थ्य पर अधिक निवेश कर सकेंगे, जिससे जीवन का चहुंमुखी विकास संभव होगा।

जैविक खेती और प्राकृतिक खेती के प्रति प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी का विशेष बल रहता है। आज जब पूरी दुनिया पर्यावरण संरक्षण और टिकाऊ कृषि की ओर बढ़ रही है, ऐसे में हमारे किसानों को सस्ते दामों पर जैव-कीटनाशकों और सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए जी.एस.टी. 12 प्रतिशत से घटाकर 5 प्रतिशत किया गया है। इससे किसान रासायनिक उर्वरकों पर निर्भर रहने के बजाय धीरे-धीरे जैविक उर्वरकों की ओर बढ़ेंगे। मिट्टी की उर्वरता बढ़ेगी, धरती माँ का स्वास्थ्य सुधरेगा और साथ ही किसानों की लागत भी कम होगी। हमारे देश के किसानों की जोत का आकार छोटा है इसलिए हम इंटीग्रेटेडफार्मिंग और कृषि संबद्ध क्षेत्रों को प्रोत्साहित कर रहे हैं ताकि किसानों की आय तेजी से बढ़े।

सरकार का स्पष्ट मानना है कि किसानों के जीवन में समृद्धि का उजाला लाने के लिए मूल्य संवर्धन भी आवश्यक है। जीएसटी सुधारों से खाद्य प्रसंस्करण उद्योग को राहत मिली है। कोल्डस्टोरेज और प्रोसेसिंगयूनिट्स में निवेश बढ़ने से किसानों की उपज लंबे समय तक सुरक्षित रहेगी और प्रसंस्करण के बाद उसे बेहतर दाम मिलेगा। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने हमेशा कहा है कि वे किसानों, मछुआरों और पशुपालकों के हितों के विरुद्ध किसी भी नीति और समझौते को स्वीकार नहीं करेंगे। आज का यह सुधार उसी संकल्प का प्रमाण है। इससे हमारी विदेशी वस्तुओं पर निर्भरता घटेगी और 'मेक इन इंडिया' व 'आत्मनिर्भर भारत' को बल मिलेगा।

ग्रामीण भारत की समृद्धि का आधार स्वयं सहायता समूह की हमारी बहनें है। जीएसटी सुधारों से इन समूहों और एमएसएमई की लागत घटेगी, जिससे गाँव और कस्बों में छोटे उद्योग पनपेंगे। ग्रामीण उद्योगों और स्टार्टअप्स के लिए गांवों में प्रसंस्करण ईकाइयाँ, भंडारण और परिवहन सुविधाएँ विकसित होने से विकसित और आत्मनिर्भर भारत को नई दिशा मिलेगी। कर घटने से बिक्री बढ़ेगी, रोजगार के अवसर बढ़ेंगे और युवा अपने गाँव में रहकर ही आत्मनिर्भर बन पाएंगे। मैं पूरे विश्वास के साथ कहता हूँ कि ये सुधार, स्वदेशी से समृद्धि के संकल्प को सार्थक करेंगे जिससे हमारी अर्थव्यवस्था "लॉन्ग लिव इकॉनमी" बनेगी।

ये सुधार केवल कर की दर घटाने भर का निर्णय नहीं है, बल्कि किसान, छोटे व्यापारी, पशुपालक, मछुआरे और कुटीर उद्योग चलाने वाली बहनों के जीवन में नई ऊर्जा भरने का पुण्य प्रयास है। हमारी सरकार 'सबका साथ-सबका विकास' और अंत्योदय के संकल्प के साथ यही सिद्ध कर रही है कि खेत-खलिहान की खुशहाली ही राष्ट्र की प्रगति का पर्याय है। अबकी बार पूरा देश 'स्वदेशी से समृद्धि' के संकल्प के साथ दीपावली मनाएगा। घर-घर स्वावलंबन के दीप जलेंगे, कुटीर उद्योगों से जय स्वदेशी का मंगल स्वर गूंजेगा और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी के नेतृत्व में हमारे किसान विकसित भारत के संकल्प को सिद्ध करेंगे।

दाल उत्पादन

आत्मनिर्भरता से ही सुधरेगी देश की सेहत

प्रमोद भारगवा

भारत ने वर्ष 2030-31 तक दलहन उत्पादन को 252 लाख टन से बढ़ाकर 350 लाख टन करने का लक्ष्य तय किया है। इसके लिए 35 लाख हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि को खेती में शामिल किया जाएगा, ताकि दालों के आयात पर निर्भरता घटे और देश दलहन उत्पादन में आत्मनिर्भर बन सके।

दलहन उत्पादन में आत्मनिर्भर होने के लिए वर्ष 2030-31 तक उत्पादन को 252 लाख टन से बढ़ाकर 350 लाख टन करने का लक्ष्य तय किया है। इस हेतु 35 लाख हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि दलहन उत्पादन के दायरे में लाई जाएगी। विडंबना देखिए, भारत दुनिया का सबसे बड़ा दलहन उत्पादक और उपभोक्ता देश है, लेकिन दालों की आपूर्ति आयात पर निर्भर है।

आहार में पौष्टिक तत्वों का कारक मानी जाने वाली दालें, बढ़ते दामों के कारण गरीब की शारीरिक जरूरत पूरी नहीं कर रही है। ये हालात मानसून के दौरान औसत से कम या ज्यादा बारिश होने से तो उत्पन्न होते ही हैं, किसान के नकदी फसलों की ओर रुख करने के कारण भी हुए हैं। यही नहीं, यह स्थिति इसलिए भी बनी, क्योंकि पूर्ववर्ती सरकार की गलत नीतियों के चलते किसान को खाद्य वस्तुओं की बजाय, ईंधन और फूलों की फसल उगाने के लिए, कृषि विभाग ने जागरूकता के अभियान चलाए। यही वजह रही कि भूमंडलीकरण के दौर में दालों की पैदावार लगातार कम होती चली गई। दाल उत्पादन का रकबा लगभग 15 हजार हैक्टेयर कम हो गया। भारत में दालों की सालाना खपत 220 से 230 लाख टन है। मांग और आपूर्ति के इस बड़े अंतर के चलते जमाखोरों और दाल के आयातक व्यापारियों को भी बार-बार करने का मौका मिल जाता है।

पौष्टिक आहार देश के हरेक नागरिक के स्वस्थ जीवन से जुड़ा अहम प्रश्न है। संविधान के मूलभूत अधिकारों में भोजन का अधिकार शामिल है। चूंकि दालें प्रोटीन और पौष्टिकता का महत्वपूर्ण जरिया है, इसलिए इनके आयात होने के कारण इनके भाव भी बीच-बीच में बढ़ जाते हैं। इस कारण मध्यवर्गीय व्यक्ति की थाली से दाल गायब होने लगती है। चूंकि दाल व्यक्ति की सेहत से जुड़ी है और बीमारी की हालत में तो रोगी को केवल दाल-रोटी खाने की ही सलाह चिकित्सक देते है। वर्ष 1951 में प्रतिव्यक्ति दालों की उपलब्धता 60 ग्राम थी, जो वर्ष 2010 में घटकर 34 ग्राम रह गई। जबकि अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुसार यह मात्रा 80 ग्राम होनी चाहिए। दालें भारत में प्रोटीन का प्रमुख स्रोत मानी जाती हैं। लेकिन स्थानीय मांग पूरी करने के लिए दाल उत्पादन में किसान को बड़ी मेहनत करनी पड़ती है। तुअर दाल की फसल आठ माह में तैयार होती है। बावजूद किसान को उचित दाम नहीं मिलते हैं। गोया, किसान साल में एक फसल उगाने में रुचि कैसे लें? विदेशों में रहने वाले भारतीय भी सबसे ज्यादा तुअर की दाल खाना पसंद करते हैं। देश में सबसे अधिक चने और अरहर की खेती होती है। इनके अलावा मूंग और उड़द दालें पैदा होती हैं। देश में 10 राज्यों के किसान दालों की खेती करते हैं। इनमें सबसे अधिक उत्पादक राज्य महाराष्ट्र है। दालें मुख्य रूप से खरीफ की फसल हैं, जो वर्षा ऋतु में बोई जाती है। इस ऋतु में करीब 70 प्रतिशत दालों का उत्पादन होता है।

केंद्रीय उपभोक्ता मामलों के मंत्रालय के अनुसार दालों के तात्कालिक भाव 85.42 रुपये प्रति किलो से लेकर 112.88 रुपए प्रति किलो तक है। भावों में इस उछाल का कारण जमाखोरी और सट्टेबाजी के साथ आयात का कुचक्र है। टाटा, महिंद्रा, ईजी-डे और रिलायंस जैसी बड़ी कंपनियां जब से दाल के व्यापार से जुड़ी हैं, तब से ये जब चाहे तब मुनाफे के लिए दाल से खिलवाड़ करने लग जाती हैं। जब कंपनियां बड़ी तादाद में दालों का भंडारण कर लेती हैं, तो भावों में कृत्रिम उछाल आ जाता है। हालांकि केंद्र सरकार ने दालों का भंडारण सितंबर 2024 से सीमित किया हुआ है। इस कारण भाव नियंत्रण में हैं। मीडिया दाल के बढ़ते भावों को गरीब की थाली से जोड़कर उछालता है। तब सरकार दाल के आयात के लिए विवश हो जाती है। मसलन देसी-विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हर हाल में पौ-बारह बने रहते है। इन कंपनियों का दबदबा इतना है कि कोई भी राज्य सरकार इनके गोदामों पर छापे डालने का जोखिम उठाने का साहस नहीं जुटा पाती। लिहाजा कालाबाजारी बदस्तूर रहती है। ये कंपनियां मसूर और मटर की दाल कनाडा से, उड़द और अरहर की दाल बर्मा के रंगून से, राजमा चीन से और काबुली चना ऑस्ट्रेलिया से आयात करती हैं। इनके अलावा अमेरिका, रूस, केन्या, तंजानिया, मोजांबिक, मलावी और तुर्की से भी दालें आयात की जाती हैं। कनाडा ने मसूर दाल के भाव पिछले साल की तुलना में दोगुने कर दिए है। कनाडा एशियाई देशों में सबसे ज्यादा दालों का निर्यात करने वाला देश है।

इस नाते यह कहने में कोई दो राय नहीं कि विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों की बात तो छोड़िए, देशी कंपनियां भी भारतीय कृषि को बदहाल बनाए रखना चाहती हैं। आयात की जब इन्हें खुली छूट मिल जाती है तो ये जरूरत से ज्यादा दाल व तेल का आयात करके भारत को डंपिंग ग्राउंड बना देती हैं। तय है, कालांतर में भारत की तरह दूसरे देशों में यदि मौसम रूठ जाता है तो दाल और प्याज की तरह खाद्य तेल के भाव भी आसमान छूने लगते हैं। सस्ते तेल का आयात जारी रहने की वजह से ही भारत में तिलहन का उत्पादन प्रभावित हो रहा है। बावजूद हमारे नेता ऐसी नीतियों को बढ़ावा देने की कोशिशों में लगे रहे हैं कि दलहन और तिलहन के क्षेत्र में भारत पूरी तरह स्वावलंबी बना रहे।

मौजूदा केंद्र सरकार ने 100 पिछड़े जिलों में दालों के उत्पादन का दायरा बढ़ाकर आत्मनिर्भरता की दिशा में महत्वपूर्ण पहल की है।

यूपी सरकार ने आलू किसानों को दी बड़ी राहत, बीज पर मिलेगी 800 रुपये प्रति क्विंटल की छूट

उत्तर प्रदेश सरकार ने राज्य के आलू किसानों के लिए एक बड़ी राहत भरी घोषणा की है। एक उच्चस्तरीय समीक्षा बैठक में यह फैसला लिया गया कि वर्ष 2025-26 के लिए आलू के बीज पर 800 रुपये प्रति क्विंटल की छूट दी जाएगी। इसका सीधा लाभ राज्य के आलू उत्पादक किसानों को मिलेगा।

बैठक में लिया गया फैसला

राज्य के उद्यान मंत्री (स्वतंत्र प्रभार) दिनेश प्रताप सिंह की अध्यक्षता में उनके आधिकारिक निवास पर हुई इस बैठक में उद्यान विभाग के वरिष्ठ अधिकारियों ने भाग लिया। मंत्री ने स्पष्ट किया कि यह छूट केवल किसानों को ही दी जाएगी। शोध संस्थानों (रिसर्च इंस्टीट्यूट) और अन्य सरकारी संस्थान इस योजना के दायरे में नहीं होंगे।

बीज की नई कीमतें होंगी इतनी

वर्तमान में, उद्यान विभाग द्वारा आलू बीज की कीमतें 2760 रुपये से 3715 रुपये प्रति क्विंटल के बीच हैं। 800 रुपये प्रति क्विंटल की छूट मिलने के बाद अब किसानों को उच्च गुणवत्ता वाले बीज सिर्फ 1960 रुपये से 2915 रुपये प्रति क्विंटल की दर पर मिल सकेंगे। यह दर निजी बीज कंपनियों की वर्तमान औसत दरों (2500-3500 रुपये/क्विंटल) से काफी कम है, जिससे किसानों को आर्थिक लाभ होगा।

उद्देश्य : खेती को प्रोत्साहन और उत्पादन बढ़ाना

मंत्री दिनेश प्रताप सिंह ने कहा कि इस कदम का मुख्य उद्देश्य किसानों को गुणवत्तापूर्ण बीज अपनाने और आलू की खेती के लिए प्रोत्साहित करना है। उन्होंने कहा, क्वालिटी वाले बीजों की बेहतर उपलब्धता से प्रदेश में आलू का उत्पादन बढ़ेगा। उन्होंने इसे किसानों की आय बढ़ाने और राज्य की कृषि अर्थव्यवस्था को मजबूत करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम बताया।

कैसे मिलेगा बीज?

उद्यान विभाग के पास फिलहाल लगभग 41,876 क्विंटल आलू बीज का भंडार है। इन बीजों को किसानों को नकद भुगतान पर उपलब्ध कराया जाएगा। इससे किसान न केवल अपनी वर्तमान फसल के लिए, बल्कि भविष्य के लिए बीज उत्पादन भी कर सकेंगे। किसान अपने जिले के उद्यान विभाग के अधिकारी से संपर्क करके इन बीजों को प्राप्त कर सकते हैं।

यूपी है देश का सबसे बड़ा आलू उत्पादक

उत्तर प्रदेश देश का सबसे बड़ा आलू उत्पादक राज्य है। यहां लगभग 6.96 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में आलू की खेती होती है, जिसके लिए करीब 26 लाख मीट्रिक टन बीज की आवश्यकता होती है। देश के कुल आलू उत्पादन में उत्तर प्रदेश की हिस्सेदारी लगभग 30 से 35 प्रतिशत है। इसलिए, यह निर्णय राज्य की कृषि अर्थव्यवस्था के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण माना जा रहा है। मंत्री ने अधिकारियों को निर्देश दिए है कि इस छूट का लाभ सभी जिलों के किसानों को शीघ्र और पारदर्शी तरीके से मिले तथा बीज वितरण की प्रक्रिया समय पर पूरी की जाए।

विदर्भ के मंगरुलपीर तालुका में किसानों ने कई ग्रुप बनाए

एक-दूसरे की फसल काट रहे किसान, मज़दूरों की कमी खत्म, लागत भी घटी

किसानों की आत्महत्या के लिए बदनाम महाराष्ट्र के विदर्भ के वाशिम ज़िले के मंगरूलवीर तालुका के किसान आपस में मिलकर एक-दूसरे की फसल काट रहे हैं। इसके लिए किसानों ने समूह बनाए हैं। हर समूह में 10-12 किसान होते हैं। वे एक साथ किसी एक खेत में जाते हैं। एक दिन में एक किसान की फसल काटते हैं। इस तरह 10-12 दिन में समूह के सभी किसानों की फसल कट जाती है। इसके लिए किसी को कोई मज़दूरी नहीं देनी होती। इससे किसानों को मज़दूर नहीं ढूंढने पड़ रहे। साथ ही खेती की लागत भी कम हो गई है।

100 किसानों के एक साथ आने से शुरू हुई मुहिम अब कई गांवों में फैल रही है। इसकी शुरूआत तैयार सोयाबीन की कटाई के लिए मज़दूर न मिलने से हुई। यहां सभी किसानों की सोयाबीन एक ही समय में कटाई के लिए तैयार होती है, जिससे मज़दूर नहीं मिलते।

एक दिन में काट दिया 15 एकड़ खेत

वाशिम के रवि नारायण चुंबले ने 15 एकड़ ज़मीन ठेके पर लेकर सोयाबीन की खेती की थी। मौसम विभाग ने 4-5 अक्तूबर को भारी बारिश की चेतावनी जारी की। रवि घबरा गए। उन्होंने समूह को अपनी समस्या बताई। अगले दिन 64 किसान रवि के खेत पहुंचे और एक ही दिन में पूरी फसल काट दी। वे अपने साथ अपना खाना भी लाए थे।

RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210